सरल

संस्कृत-पद्य-संग्रह

संस्कृत-पद्य-संग्रहः

12·4

[कतिपय अत्यन्त सरल, सरस एवं ज्ञानवर्द्धक पद्यमय सुभाषितों का संग्रह जिन के अध्ययन से संस्कृत के प्रारम्भिक विद्यार्थियों को विविध विषयों के ज्ञान के साथ-साथ संस्कृत सीखने में भी अत्यधिक सहायता मिल सकती है]

प्रथम भाग

सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय

वाराणसी।

सरल-

संस्कृत-पद्य-संग्रह

[संस्कृत के कतिपय अत्यन्त सरल सरस एवं ज्ञानवर्द्धक पद्यमय सुभाषितों का संग्रह जिन के अध्ययन से संस्कृत के प्रारम्भिक विद्यार्थियों को विविध विषयों के ज्ञान के साथ-साथ संस्कृत सीखने में भी अत्यधिक सहायता मिल सकती है]

प्रथम भाग

रचयिता—

श्री वासुदेव द्विवेदी वेदशास्त्री साहित्याचार्य

(सम्पादक—संस्कृत-प्रचार पुस्तक माला)

सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय

वा रा ण सी ।

प्रकाशक—
सार्वभौम संस्कृत-प्रचार कार्यालय
डी० ३८।२० हौज कटोरा
वा रा ण सी।

❀

आवृत्ति : द्वितीय
संख्या : एक हजार (परिवर्तित)
मूल्य : १–५०

❀

मुद्रक—
बैजनाथ प्रसाद
कल्पना प्रेस
रामकटोरा रोड, वाराणसी।

कृतज्ञता-प्रकाश

कार्यालय द्वारा "सरल संस्कृत पद्य संग्रह" तथा "सरल संस्कृत गद्य संग्रह" नाम की दो पुस्तकें एक साथ प्रकाशित की गई हैं जिनके प्रकाशन में आन्ध्र प्रदेश की सरकार ने तथा वहाँ की संस्कृत-संस्थाओं एवं संस्कृतप्रेमी सज्जनों ने आर्थिक सहायता प्रदान की है। सहायकों की शुभ नामावली तथा सहायता की राशि हार्दिक कृतज्ञता एवं धन्यवाद ज्ञापन के साथ निम्नांकित पंक्तियों में प्रकाशित है—

आन्ध्र प्रदेश की सरकार, हैदराबाद	५००-००
अ० भा० संस्कृत प्रचार परिषद्, राजमहेन्द्रवरम्	[illegible]
श्रीमती विवेकानन्दा देवी ,,	[illegible]
विद्वत्परिवार की एक महिला ,,	[illegible]
श्री वेणु गोपाल संस्कृत प्रचार सभा, काकिनाड़ा	[illegible]
श्री कुरुसेटि नागभूषणम्, भीमवरम्	१००-००
श्री गोट्टिमुक्कुल रङ्गराजु ,,	३२-००
श्री वेदशास्त्र परिषद् ,,	१६-००
डा० श्री धूलिपाद अर्क सोमयाजी ,,	१०-००
श्री डा० के० वी कृष्णमूर्ति, संस्थापक, संस्कृत कलाशाला, गुन्टूर	२५-००
श्री डी० रङ्गाचार्य प्रि० श्री राममनोह ओ० हायर सेकेन्डरी स्कूल ,,	१५-००
श्री सूरि रामकोटि शास्त्री, अध्यक्ष, संस्कृत कलशाला, तेनाली	५८-००
म्युनिसिपल हायर सेकेन्डरी स्कूल, नरसाराव पेट	५०-००
श्री एन० सी० आंजनेयुलु, प्रधानाध्यापक ,,	२५-००
सुब्बराव एन्ड नरायण कालेज ,,	५०-००
श्री ताल्लूरि नागेश्वर राव ,,	५०-००
श्री यार्लगड्ड रंगनायकुलु चौधुरी, कारंचेडु, गुन्टूर	५०-००
श्रीमती लक्ष्मीकान्तम्मा (लोकसभा-सदस्या) आदि, वापट्ला, गुन्टूर	१०१-००
संस्कृत विज्ञान वर्द्धिनी परिषद्, वारंगल	५०-००
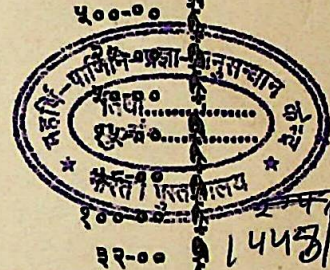
आवश्यक निवेदन

पुस्तक का परिचय

इस पुस्तक में संस्कृत के विभिन्न ग्रन्थों से संकलित कर कुछ धर्म, नीति एवं सुभाषितसम्बन्धी पद्यों का प्रकाशन किया गया है जिनकी संख्या सब मिला कर- है। जो पद्य जिस ग्रन्थ से लिया गया है उसके नाम तथा यथासम्भव श्लोकसंख्या का भी टिप्पणी के रूप में उल्लेख कर दिया गया है। इस पुस्तक के नामानुसार ही इस में ऐसे ही पद्यों का संकलन किया गया है जो सन्धि एवं समास की जटिलता से रहित हैं और इसी लिये अत्यन्त सरल, सुबाच्य तथा सुबोध हैं। पहले सभी पद्य अपने पूर्ण रूप में ऊपर दिये गये हैं। फिर नीचे खण्ड कर उनके एक एक वाक्य एक एक पंक्ति में बाईं ओर दिये गये हैं और फिर उनके सामने दाहिनी ओर उनका पदों के अनुसार हिन्दी अर्थ दिया गया है जिससे प्रत्येक संस्कृत पद का स्पष्ट रूप से अलग अलग अर्थ मालूम हो सके। यदि मूल पद्य में सन्धियाँ हैं तो नीचे के वाक्यों में उन्हें तोड़ दिया गया है जिससे पाठकों को सन्धि का भी ज्ञान होता चले। इसके पश्चात् उस पद्य में आये हुए समस्त पदों के मूल संज्ञा शब्दों, विशेषण शब्दों तथा अव्ययों का भी उल्लेख कर दिया गया है। यह क्रम विद्यार्थियों का पदपरिचय की ओर ध्यान आकृष्ट करने और मार्गदर्शन के लिये कुछ ही पद्यों तक चलाया गया है और फिर आगे के पद्यों में विशेष विशेष पदों का ही परिचय दिया गया है।

पद्यों का वर्गीकरण

प्रायः सभी धर्म नीति एवं सुभाषित के ग्रन्थों में विषयानुसार पद्यों का वर्गीकरण किया गया है परन्तु इस पुस्तक में पद्यों का वर्गीकरण संस्कृत सिखाने की दृष्टि से सुबन्त प्रकरण, तिङन्त प्रकरण एवं कृदन्त प्रकरण के रूप में किया गया है। जिन पद्यों में सुबन्त पद अधिक आये हैं वे सुबन्त प्रकरण में रखे गये हैं। उन में भी फिर विभक्तियों के अनुसार वर्गीकरण किया गया है और जिन पद्यों में एक प्रकार की विभक्तियों का प्रयोग हुआ है उन्हें एक साथ रखा गया है। इसी प्रकार जिन पद्यों में तिङन्त अर्थात् क्रियापदों का अधिक प्रयोग हुआ है उन्हें तिङन्त प्रकरण में रखा गया है और उनका भी पुनः कतिपय लकारों के अनुसार वर्गीकरण कर दिया गया है। यही क्रम कृदन्त प्रकरण का भी है। जिन पद्यों में कृदन्त पद अधिक प्रयुक्त हुए हैं उन्हें कृदन्त प्रकरण में रखा गया है और फिर उनका भी कृत्प्रत्ययों के अनुसार विभाग कर दिया गया है। तिङन्त एवं कृदन्त प्रकरण के पद्यों में जिन धातुओं से बने हुए विविध तिङन्त एवं कृदन्त पद प्रयुक्त हुए हैं

उनका धातुओं के गण आदि के निर्देश के साथ पूरा परिचय दे दिया गया है। इन सुबन्त, तिङन्त एवं कृदन्त पदों के अतिरिक्त जो कुछ पद क्रियाविशेषण एवं अव्यय के रूप में प्रयुक्त हुए हैं उनका भी उस पद्य के नीचे उल्लेख कर दिया गया है।

पुस्तक का उद्देश्य : इससे लाभ

इन पद्यों के संकलन, इनके इस प्रकार के वर्गीकरण तथा उनका वाक्यों के रूप में पुनः पृथक उल्लेख कर तदनुसार उनके आगे हिन्दी अर्थ देने का उद्देश्य संस्कृत के प्रारम्भिक विद्यार्थियों तथा संस्कृत सीखने के इच्छुक प्रौढ़ व्यक्तियों को पद्यों के आधार पर एक प्रकार के ही अनेक सुबन्त, तिङन्त एवं कृदन्त पदों का एक साथ ही विपुलमात्रा में ज्ञान कराना तथा इस प्रकार उन्हें अल्प समय और अल्प परिश्रम में ही संस्कृत का अधिक ज्ञान प्राप्त करने में सहायता पहुँचाना है और यही इस पुस्तक के प्रकाशन का मुख्य उद्देश्य है। परन्तु इस पुस्तक के अध्यन से इसके अतिरिक्त भी पाठकों को अनेक लाभ हो सकते हैं। द्रुत गति से संस्कृत वाचने का अभ्यास होगा, प्रत्येक पद्य में एक ही प्रकार के अनेक वाक्यों के पढ़ने में आनन्द मिलेगा, विविध लोक व्यवहारोपयोगी विषयों का ज्ञान होगा, विनोद-पूर्ण पद्यों के पढ़ने से मनोरञ्जन होगा तथा उत्तम जीवन के निर्माण में सहायक उत्तमोत्तम शिक्षायें मिलेगीं। इस प्रकार यह पुस्तक एक होते हुए भी अनेक प्रकार से उपकारक है और न केवल संस्कृत के विद्यार्थी ही प्रत्युत सभी शिक्षित नर-नारी इस पुस्तक के अध्ययन से लाभान्वित हो सकते हैं।

पढ़ने की विधि

१—इस पुस्तक के पढ़ने से पूर्व पाठकों को कार्यालय द्वारा प्रकाशित सुगम शब्द रूपावलि एवं सुगम धातु रूपावलि की सहायता से कुछ शब्दों तथा धातुओं के समस्त रूप भेदों का ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिये तथा उपसर्गों के योग से धात्वर्थ में जो परिवर्तन हो जाता है उसकी भी जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

२—पद्यों में जो जो शब्द एवं धातु प्रयुक्त हैं उनके सभी विभक्तियों तथा समस्त तिङ् एवं कृत् प्रत्ययों में रूप चलाने का अभ्यास करना चाहिये।

३—इन पद्यों को बार बार पढ़ना चाहिये जिससे ये सभी पद्य और इनमें प्रयुक्त सभी शब्दरूप एवं धातुरूप पाठकों को हृदयस्थ तथा यथासम्भव मुखस्थ भी हो जाय।

४—इस पुस्तक के साथ पाठकों को इसके साथ ही प्रकाशित पुस्तक सरल संस्कृत गद्यसंग्रह को भी अवश्य पढ़ना चाहिये। यह दोनों पुस्तकें एक दूसरे की पूरक हैं तथा संस्कृत पढ़ने-पढ़ानें में अभिरुचि बढ़ाने की दृष्टि से अद्वितीय हैं।

पुस्तक की कुछ त्रुटियाँ

कतिपय अनिवार्य कारणों से पुस्तक में कुछ त्रुटियाँ भी रह गई हैं। प्रत्येक पद्य के नीचे के वाक्यों का उनके पद्यों के अनुसार ही हिन्दी अर्थ देने से कहीं कहीं भाषा की सुन्दरता नष्ट हो गई है। कुछ संस्कृत के शब्द उसी प्रकार हिन्दी में रख दिये गये हैं अतः उनका अर्थ समझने में कुछ पाठकों को कठिनाई हो सकती है। कुछ पद्यों के तु, च, तथा, हि, वै, ख, आदि शब्दों का कहीं अनावश्यक होने से तथा कहीं उस पंक्ति में स्थान न होने के कारण अर्थ नहीं दिया जा सका है। जिन पद्यों में कोई क्रिया नहीं है उनके अर्थ में ऊपर से कोई उपयुक्त क्रिया जोड़ दी गई है पर वैसी ही क्रिया संस्कृत में नहीं दी गई है। प्रूफ संशोधन तथा मुद्रणसम्बन्धी त्रुटियों का होना तो अनिवार्य ही है। फिर भी मुझे आशा है कि इस पुस्तक के अन्य गुणों को ध्यान में रखते हुए पाठकगण इसका स्वागत करेंगे तथा इसके पठन-पाठन, प्रयोग, प्रचार एवं चर्चा द्वारा हमारे प्रयत्न को सफल बनाने की कृपा करेंगे।

कृतज्ञता प्रकाश

अन्त में हम अपने परम सम्माननीय, सहृदय सुहृद्, विद्वद्वर श्री के० लक्ष्मण शास्त्रीजी, उपसञ्चालक, उच्च संस्कृत शिक्षा, आन्ध्रप्रदेश, हैदराबाद के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रगट करना चाहते हैं जिनकी कृपा से हमें इस वर्ष आन्ध्र प्रदेश में दो ढाई मास तक भ्रमण करने का, वहाँ से कुछ सहायता प्राप्त करने का तथा उससे इस पुस्तक के चिरकांक्षित पुनः प्रकाशन का सौभाग्य प्राप्त हो सका।

यद्यपि आन्ध्रप्रदेश की सहायता होने के कारण हम इस पुस्तक को उस प्रदेश की तेलगू लिपि में ही प्रकाशित करना चाहते थे और उसी भाषा में श्लोकों का अर्थ भी देना चाहते थे। परन्तु आन्ध्रप्रदेश की सरकार और वहाँ की जनता में नागरी लिपि तथा हिन्दी भाषा के प्रति भी स्नेह को देखकर तथा तेलगू-अनुवाद में कुछ विलम्ब होने की सम्भावना से भी हमने इसका इस रूप में ही प्रकाशन किया है। फिर भी हमारी इच्छा है कि आन्ध्रप्रदेश की सर्वसाधारण जनता में संस्कृत-प्रचार की दृष्टि से हम इस पुस्तक का यथाशीघ्र तेलगू लिपि और भाषा में भी प्रकाशन करायें और हमें आशा है कि संस्कृत-प्रेमियों के सहयोग से हम यथासंभव शीघ्र ही अपनी इस इच्छा को भी पूर्ण करने में समर्थ हो सकेंगे।

चैत्र कृष्ण द्वादशी २०२४ वि०
विनीत—

२५—३—१९६८ ई०
सम्पादक

प्रकरण तथा विषयसूची

१—सुबन्त प्रकरण

२—तिङन्त प्रकरण

३—कृदन्त प्रकरण

संकेत-सूची

अ०	अदादिगणी	प०	पञ्चमी
आ०	आत्मनेपदी	प०	परस्मैपदी
उ०	उभयपदी	पु०	पुंलिंग
ए०	एकवचन	पु०	पुरुष
क्र्या०	क्र्यादिगणी	प्र०	प्रथम
च०	चतुर्थी	प्र०	प्रथमा
चु०	चुरादिगणी	ब०	बहुवचन
णि०	णिजन्त	भ्वा०	भ्वादिगणी
त०	तनादिगणी	रु०	रुधादिगणी
तु०	तुदादिगणी	वि०	विशेषण
तृ०	तृतीया	ष०	षष्ठी
दि०	दिवादिगणी	स०	सप्तमी
द्वि०	द्वितीया	स्त्री०	स्त्रीलिंग
द्वि०	द्विवचन	स्वा०	स्वादिगणी
न०	नपुंसकलिंग		

सरल

संस्कृत-पद्य-संग्रह

सुबन्त प्रकरण—प्रथमा

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव-देव ॥

त्वम् एव माता च त्वम् एव पिता	तुम्हीं माता और तुम्हीं पिता (हो)
त्वम् एव बन्धुः च त्वम् एव सखा	तुम्हीं बन्धु और तुम्हीं मित्र (हो)
त्वम् एव विद्या त्वम् एव द्रविणम्	तुम्हीं विद्या और तुम्हीं धन (हो)
देव-देव ! मम सर्वं त्वम् एव ।	हे देवों के देव ! मेरे सब कुछ तुम्हीं (हो)

पदपरिचय—

त्वम् (मध्यमपुरुषवाचक युष्मत् शब्द—प्रथमा एकवचन)
एव (निश्चयार्थक अव्यय)
मम (उत्तमपुरुषवाचक अस्मत् शब्द—षष्ठी एकवचन)
माता (ऋकारान्त स्त्रीलिङ्ग मातृशब्द—प्रथमा एकवचन)
पिता (ऋकारान्त पुंलिङ्ग पितृशब्द—प्रथमा एकवचन)
बन्धुः (उकारान्त पुंलिङ्ग बन्धुशब्द—प्रथमा एकवचन)

सखा (इकारान्त पुंलिङ्ग सखि शब्द—प्रथमा एकवचन)
विद्या (आकारान्त स्त्रीलिङ्ग विद्या शब्द—प्रथमा एकवचन)
द्रविणम् (अकारान्त नपुंसक लिङ्ग द्रविण शब्द—प्रथमा एकवचन)
सर्वं (अखिलवाचक सर्वनाम सर्व शब्द—सामान्य में नपुंसकलिंग का प्रयोग प्र० ए०)
देवदेव (अकारान्त पुंलिग देव शब्द—संबोधन का एकवचन)

विशेष सूचना—इस श्लोक में कोई क्रियापद नहीं है। अतः ऊपर से "असि" (हो) यह क्रिया पद जोड़ लेना चाहिये। इसी प्रकार आगे के जिन श्लोकों में कोई क्रियापद न हो वहाँ अस्ति भवति आदि क्रियापद जोड़ लेना चाहिये।

ईश्वर किसकी सहायता करता है ?

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायकृत् ॥१

उद्यमः साहसं धैर्यम्	उद्यम, साहस, धीरता,
बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः	बुद्धि, शक्ति (और) पराक्रम
एते षट् यत्र वर्तन्ते	यह छ (गुण) जहाँ रहते हैं
तत्र देवः सहायकृत्।	वहाँ ईश्वर सहायक होता है।

उद्यमः पराक्रमः देवः (अकारान्त पुंलिग प्रथमा एकवचन)
बुद्धिः शक्तिः (इकारान्त स्त्रीलिंग प्रथमा एकवचन)
सहायकृत् (तकारान्त विशेषण प्रथमा एकवचन)
एते (एतत् शब्द, प्रथमा बहुवचन)
षट् (षष् संख्यावाचक शब्द, प्रथमा बहुवचन)
यत्र तत्र (सप्तम्यर्थबोधक अव्यय)
वर्तन्ते (वृत, भ्वादिगणी आत्मनेपदी, अकर्मक, सेट्, लट् प्रथम पुरुष बहुवचन)
इसी प्रकार आगे के भी सभी श्लोकों को पदपरिचय के साथ पढ़ना चाहिये।

१—विक्रमचरितम्. ६८

धर्म के दश लक्षण

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥[1]

धृतिः क्षमा दमः अस्तेयम्	धैर्य क्षमा दम अस्तेय
शौचम् इन्द्रिय - निग्रहः	शौच इन्द्रियों का निग्रह
धीः विद्या सत्यम् अक्रोधः	धी विद्या सत्य (और) अक्रोध
दशकं धर्मलक्षणम् ।	ये दश धर्म के लक्षण हैं ।

दमः इन्द्रियनिग्रहः अक्रोधः (पुं० प्र० ए०) धृतिः धीः क्षमा विद्या (स्त्री० प्र० ए०) अस्तेयम् शौचम् सत्यम् दशकम् धर्मलक्षणम् (न० प्र० ए०) । शब्दार्थ—दम—मन का दमन । अस्तेय—चोरी न करना । धी—बुद्धि ।

मनुष्य को महान् बनाने वाले गुण

अष्टौ गुणाः पुरुषं दीपयन्ति प्रज्ञा च कौल्यं च दमः श्रुतं च ।
पराक्रमश्चाबहुभाषिता च दानं यथाशक्ति कृतज्ञता च ॥[2]

अष्टौ गुणाः पुरुषं दीपयन्ति	आठ गुण मनुष्य को महान् बनाते हैं
प्रज्ञा कौल्यं दमः च श्रुतम्	प्रज्ञा कुलीनता इन्द्रियसंयम और अध्ययन
पराक्रमः च अबहुभाषिता च	पराक्रम और बहुत न बोलना
यथाशक्ति दानं च कृतज्ञता ।	यथाशक्ति दान और कृतज्ञता ।

अष्टौ (अष्टन् प्र० ब०) गुणाः (गुण—प्र० ब०) पुरुषम् (पुरुष— पुं० द्वि० ए०) दमः पराक्रमः (पुं० प्र० ए०) प्रज्ञा अबहुभाषिता कृतज्ञता (स्त्री० प्र० ए०) कौल्यं श्रुतं दानं (न० प्र० ए०) यथाशक्ति (अव्यय) दीपयन्ति (दीप चमकना, दिवादिगणी आत्मनेपदी, दीप्यते, णि० दीपयति, लट् प्रथम पुरुष बहुवचन) ।

1—मनुस्मृति ६–९२   2—विदुरनीति ३.५२

दरिद्रता से सब कुछ नष्ट हो जाता है

कुलं शीलं च सत्यं च प्रज्ञा तेजो धृतिर्बलम् ।
गौरवं प्रत्ययः स्नेहो दारिद्र्येण विनश्यति ॥१

कुलं शीलं सत्यम्	कुल शील सत्य
प्रज्ञा तेजः धृतिः बलम्	प्रज्ञा तेज धैर्य बल
गौरवं प्रत्ययः स्नेहः	गौरव विश्वास (और) स्नेह
दारिद्र्येण विनश्यति ।	दरिद्रता से नष्ट हो जाता है ।

प्रत्ययः स्नेहः (पुं० प्र० ए०) प्रज्ञा धृतिः (स्त्री० प्र० ए०) कुलं शीलं सत्यं बलं गौरवं (न० प्र० ए०) तेजः (तेजस् न० प्र० ए०) दारिद्र्येण (दारिद्र्य न० तृ० ए०) विनश्यति (वि उपसर्ग नश् धातु दिवादि प० लट् प्र० पु० ए०) ।

भूखे और प्यासे को कुछ अच्छा नहीं लगता

शय्या वस्त्रं चन्दनं चारु हास्यं वीणा वाणी सुन्दरी या च नारी ।
न भ्राजन्ते क्षुत्पिपासातुराणां सर्वारम्भास्तण्डुलप्रस्थमूलाः ॥२

शय्या वस्त्रं चन्दनं चारु हास्यम्	शय्या, वस्त्र, चन्दन, अच्छी हँसी
वीणा वाणी या च सुन्दरी नारी	वीणा, वाणी और सुन्दर नारी (ये सब)
क्षुत्पिपासाऽतुराणां न भ्राजन्ते	भूख और प्याससे पीड़ितों को नहीं अच्छी लगतीं
सर्वारम्भाः तण्डुलप्रस्थमूलाः ।	सब काम एक सेर चावल से ही होते हैं ।

शय्या, वीणा, वाणी, सुन्दरी, नारी (स्त्री० प्र० एक०) वस्त्रम्, चन्दनम्, चारु, हास्यम् (नपुं० प्र० एक०) चारु, सुन्दरी (विशेषण) क्षुत्पिपासातुराणाम् (क्षुध्-पिपासा-आतुर-ष० बहु०) भ्राजन्ते (भ्राज भ्वा० आ० सेट्-- लट्, प्र० पु० बहु०)

१—चाणक्यनीति ८-११४ २—सुभाषितरत्नभाण्डागार

अहिंसा का महत्त्व

अहिंसा परमो धर्मः अहिंसा परमं तपः।
अहिंसा परमं सत्यं यतो धर्मः प्रवर्तते ॥[1]

अहिंसा परमः धर्मः	अहिंसा परम धर्म है
अहिंसा परमं तपः	अहिंसा परम तप है
अहिंसा परमं सत्यम्	अहिंसा परम सत्य है
यतः धर्मः प्रवर्तते।	जिससे धर्म जीवित रहता है।

तपः (तपस् नपुं० प्र० एक०) यतः (यत्—पञ्चम्यन्त अव्यय) प्रवर्तते (प्र–वृत्–भ्वा० आ० सेट्, लट् प्र० एक०) रहता है, बढ़ता है।

चार अत्युत्तम बातें

न दानतुल्यं धनमन्यदस्ति न सत्यतुल्यं व्रतमन्यदस्ति।
न शीलतुल्यं शुभमन्यदस्ति न क्षान्तितुल्यं हितमन्यदस्ति ॥[2]

दानतुल्यम् अन्यत् धनं न अस्ति	दान के समान दूसरा धन नहीं है
सत्यतुल्यम् अन्यत् व्रतं न अस्ति	सत्य के तुल्य दूसरा व्रत नहीं है
शीलतुल्यम् अन्यत् शुभं न अस्ति	शील के तुल्य दूसरा शुभ नहीं है
क्षान्तितुल्यम् अन्यत् हितं न अस्ति।	क्षमा के तुल्य दूसरा हित नहीं है।

सन्धि— धनमन्यदस्ति (धनम् अन्यत् अस्ति)। इसी प्रकार व्रतम् अन्यत् अस्ति, शुभम् अन्यत् अस्ति, हितम् अन्यत् अस्ति। अस्ति (अस्—अदादि प० लट् प्र० पु० ए०)

१—अनुशासन पर्व ११५, २५ २—चतुर्वर्ग संग्रह १–१०

दैव से बढ़कर कोई बल नहीं

नहि विद्यासमो बन्धुः न च व्याधिसमो रिपुः ।
न चाऽपत्यसमः स्नेहो न च दैवात् परं बलम् ॥१

विद्यासमः बन्धुः नहि	विद्या के समान कोई बन्धु नहीं
व्याधिसमः रिपुः नहि	रोग के समान कोई शत्रु नहीं
अपत्यसमः स्नेहः नहि	सन्तान के समान कोई स्नेह नहीं
च दैवात् परं बलं नहि ।	और दैव से बड़ा कोई बल नहीं ।

विद्यासमः (विद्यया समः) व्याधिसमः (व्याधिना समः) अपत्यसमः (अपत्येन समः) । अपत्य (नपुं०) दैवात् (दैव—न० प० ए०)

कौन आदमी सदा निर्भय रहता है ।

यो धर्मशीलो जितमानरोषो विद्याविनीतो न परोपतापी ।
स्वदारतुष्टः पर-दार-वर्जितो न तस्य लोके भयमस्ति किञ्चित् ॥२

यः धर्मशीलः—	जो धर्मशील होता है
जित-मान-रोषः—	अभिमान और क्रोधको जीतने वाला होता है
विद्या-विनीतः—	विद्या से विनम्र होता है
न परोपतापी—	दूसरों को कष्ट नहीं देता
स्वदार-तुष्टः—	अपनी स्त्री में तुष्ट रहता है और
पर-दार-वर्जितः—	दूसरी स्त्रियों के संसर्ग से अलग रहता है
तस्य लोके—	उसे संसार में
किञ्चित् भयं न अस्ति—	कुछ भी भय नहीं होता ।

परोपतापी (परोपतापिन्—प्र० एक०) पर—उपतापिन्-पुंलिङ्ग विशेषण ।

१—चाणक्यशतकम् ७५ २—पद्मपुराण

प्रथमा—द्वितीया

कौन क्या हर लेता है ?

जरा रूपं हरति धैर्यमाशा मृत्युः प्राणान् धर्मचर्यामसूया ।
क्रोधः श्रियं शीलमनार्यसेवा ह्रियं कामः सर्वमेवाभिमानः ॥[१]

जरा रूपं हरति	बुढ़ापा रूप को हर लेती है
आशा धैर्यं हरति	आशा धैर्य को हर लेती है
मृत्युः प्राणान् हरति	मृत्यु प्राणों को हर लेती है
असूया धर्मचर्यां हरति	असूया धर्मचर्या को हर लेती है
क्रोधः श्रियं हरति	क्रोध श्री को हर लेता है
अनार्यसेवा शीलं हरति	नीचों की सेवा शील को हर लेती है
कामः ह्रियं हरति	काम लज्जा को हर लेता है
अभिमानः सर्वम् एव हरति ।	(तथा) अभिमान सब कुछ हर लेता है ।

श्रियम् ह्रियम् (श्री ह्री—स्त्री० द्वि० ए०) हरति (हृ—भ्वादि उ० लट् प्र० पु० ए०)

कौन किसको नष्ट करता है ?

गङ्गा पापं शशी तापं दैन्यं कल्पतरुस्तथा ।
पापं तापं च दैन्यं च हन्ति साधु-समागमः ॥[२]

गङ्गा पापं हन्ति	गङ्गा पाप को नष्ट करती है
शशी तापं हन्ति	चन्द्रमा ताप को नष्ट करता है
तथा कल्पतरुः दैन्यं हन्ति	तथा कल्पवृक्ष दैन्य को नष्ट करता है
(परन्तु) साधु - समागमः	(परन्तु) सज्जनों का समागम
पापं तापं दैन्यं च हन्ति ।	पाप, ताप, और दैन्य सबको नष्ट कर देता है।

शशी (शशिन्—पुं० प्र० ए०) हन्ति (हन् —अदादि० प० लट् प्र० पु० ए० हन्ति हतः घ्नन्ति)

१—विदुरनीति ३.५० २—सुभाषितरत्नभाण्डागार ।

प्रथमा–द्वितीया

कौन किसको सुशोभित करता है ?

गुणो भूषयते रूपं शीलं भूषयते कुलम् ।
सिद्धिर्भूषयते विद्यां भोगो भूषयते धनम् ॥१

गुणः रूपं भूषयते	गुण रूप को सुशोभित करता है
कुलं शीलं भूषयते	कुल शील को सुशोभित करता है
सिद्धिः विद्यां भूषयते	सफलता विद्या को सुशोभित करती है (और)
भोगः धनं भूषयते ।	उपभोग धनको सुशोभित करता है ।

भूषयते (भूष-चुरादिगण. उभयपदी लट् प्रथम पुरुष, एकवचन)

कौन क्या बतलाता है ?

आचारः कुलमाख्याति देशमाख्याति भाषणम् ।
सम्भ्रमः स्नेहमाख्याति वपुराख्याति भोजनम् ॥२

आचारः कुलम् आख्याति	आचार कुल को बतलाता है
भाषणं देशम् आख्याति	भाषण देश को बतलाता है
सम्भ्रमः स्नेहम् आख्याति	आदर-सत्कार स्नेह को बतलाता है (और)
वपुः भोजनम् आख्याति ।	शरीर भोजन को बतलाता है ।

वपुः (वपुस् न० प्र० ए०) वपुः वपुषी वपूंषि प्रथमा, वपुः वपुषी वपूंषि द्वितीया, वपुषा वपुर्भ्याम् वपुर्भिः तृतीया इत्यादि)

आख्याति (आ, ख्या-अदादि पर० सक अनिट्, लट् प्र० पु० एक०) आख्याति, आख्यातः आख्यान्ति इत्यादि ।

१—चाणक्यनीति ८-१४ २—चाणक्यनीति ३-२

क्या किसको नष्ट कर देता है

प्रथमा—द्वितीया

प्रमादः सम्पदं हन्ति प्रश्रयं हन्ति विस्मयः ।
व्यसनं हन्ति विनयं हन्ति शोकश्च धीरताम् ॥[1]

प्रमादः सम्पदं हन्ति प्रमाद सम्पत्ति को नष्ट कर देता है
विस्मयः प्रश्रयं हन्ति विस्मय स्नेह को नष्ट कर करता है
व्यसनं विनयं हन्ति व्यसन विनय को नष्ट कर देता है
च शोकः धीरतां हन्ति । तथा शोक धीरता को नष्ट कर देता है ।

सम्पद् (सम्पद्—स्त्री० द्वि० ए०)

कौन किसे नष्ट कर देता है ?

मुदं विषादः शरदं हिमागमः तमो विवस्वान् सुकृतं कृतघ्नता ।
प्रियोपपत्तिः शुचमापदं नयः श्रियः समृद्धा अपि हन्ति दुर्नयः ॥२

विषादः मुदं हन्ति विषाद आनन्द का नष्ट कर देता है
हिमागमः शरदं हन्ति हिमागम शरद को नष्ट कर देता है
विवस्वान् तमः हन्ति सूर्य अन्धकार को नष्ट कर देता है
कृतघ्नता सुकृतं हन्ति कृतघ्नता सुकृत को नष्ट कर देती है
प्रियोपपत्तिः शुचं हन्ति प्रियवस्तु की प्राप्ति शोक को नष्ट कर देती है
आपदं नयः हन्ति नीति आपत्ति को नष्ट कर देती है तथा
दुर्नयः समृद्धा अपिश्रियः हन्ति दुर्नीति समृद्ध सम्पत्ति को भी नष्ट कर देती है ।

मुदं शरदं शुचम् आपदम् (मुद् शरद् शुच् आपद् स्त्री० द्वि० ए०) विवस्वान् (विवस्वत् पु० प्र० ए०) तमः (तमस्—न० द्वि० ए०) श्रियः (श्री-स्त्री० द्वि० ब०)

---

[1]—कुन्दमाला ३-२

वाणी ही मनुष्य का वास्तविक भूषण

प्रथमा–द्वितीया

केयूरा न विभूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वला
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नाऽलंकृता मूर्धजाः ।
वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम् ।।१

केयूराः पुरुषं न विभूषयन्ति	केयूर पुरुष को विभूषित नहीं करते
चन्द्रोज्ज्वलाः हाराः पुरुषं न विभूषयन्वि	चन्द्रमा के समान उज्ज्वल हार पुरुष को विभूषित नहीं करते
स्नानं पुरुषं न विभूषयति	स्नान पुरुष को विभूषित नहीं करता
विलेपनं पुरुषं न विभूषयति	चन्दन पुरुष को विभूषित नहीं करता
कुसुमं पुरुषं न विभूषयति	फूल पुरुष को विभूषित नहीं करता
अलंकृताः मूर्धजाः पुरुषं न विभूषयन्ति	अलंकृत केश पुरुष को विभूषित नहीं करते
एका वाणी पुरुषं समलङ्करोति	एक वाणी पुरुष को अलंकृत करती है
या संस्कृता धार्यते	जो संस्कार कर धारण की जाती है
भूषणानि खलु सततं क्षीयन्ते	भूषण तो सदा क्षीण होते रहते हैं अतः
वाग्भूषणं भूषणम् ।	वाणीरूपी भूषण ही (वास्तविक) भूषण है ।

विभूषयति (वि-भूष-चु० उ० लट् प्र० पु० ब०) समलङ्करोति सम्-अलम्-कृ-त० उ० लट् प्र० पु० ए०) धार्यते (धृ-भ्वा० उ० धरति धरते, णि० धारयति, कर्मवाच्य लट् प्र० पु० ए०)

१—नीतिशतकम् ७९

क्या किससे अच्छा लगता है ?

प्रथमा-तृतीया

दरिद्रता धीरतया विराजते कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते ।
कदन्नता चोष्णतया विराजते कुरूपता शीलतया विराजते ॥[१]

दरिद्रता धीरतया विराजते	दरिद्र भी धैर्य धारण करने से अच्छा लगता है
कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते	कुवस्त्र भी शुभ्र होने से अच्छा लगता है
कदन्नता उष्णतया विराजते	कदन्न भी गर्म होने से अच्छा लगता है
कुरूपता शीलतया विराजते	कुरूप भी उत्तम शील होने से अच्छा लगता है

विराजते (वि—राज—भ्वादिगणी आत्मने०, लट् प्रथम पुरुष एकवचन) धीरतया शुभ्रतया उष्णतया शीलतया (धीरता शुभ्रता उष्णता शीलता—स्त्री० तृ० ए०)

किन लोगों में मित्रता होती है ?

मृगाः मृगैः सङ्गमनुव्रजन्ति
गावश्च गोभिस्तुरगास्तुरङ्गैः ।
मूर्खाश्च मूर्खैः सुधियः सुधीभिः
समान-शील-व्यसनेषु सख्यम् ॥[२]

मृगाः मृगैः सङ्गम् अनुव्रजन्ति	मृग मृगों के साथ चलते हैं
गावः गोभिः सङ्गम् अनुव्रजन्ति	गौएँ गायों के साथ चलती हैं
तुरगाः तुरंगैः सङ्गम् अनुव्रजन्ति	घोड़े घोड़ों के साथ चलते हैं
मूर्खाः मूर्खैः सङ्गम् अनुव्रजन्ति	मूर्ख मूर्खों के साथ चलते हैं
सुधियः सुधीभिः सङ्गम् अनुव्रजन्ति	विद्वान् विद्वानों के साथ चलते हैं
समान-शील-व्यसनेषु सख्यं भवति	(क्योंकि) समान शील और व्यसन वालों में मित्रता होती है ।

गावः (गो—पुं० स्त्री० प्र० ब०) सुधियः (सुधी—पुं० प्र० ब)

१—चाणक्यनीति ६, १४ २—पञ्चतन्त्र १, ३०५

किसके हाथ से क्या अच्छा होता है ?

प्रथमा—तृतीया

दानम् आत्मीयहस्तेन मातृहस्तेन भोजनम् ।
तिलकं विप्रहस्तेन परहस्तेन मर्दनम् ॥[१]

दानम् आत्मीयहस्तेन शोभते	दान अपने हाथ से अच्छा होता है
भोजनं मातृहस्तेन शोभते	भोजन माता के हाथ से अच्छा होता है
तिलकं विप्रहस्तेन शोभते	तिलक ब्राह्मण के हाथ से अच्छा होता है
मर्दनं परहस्तेन शोभते	मर्दन दूसरे के हाथ से अच्छा होता है

शोभते (शुभ—भ्वा० आ० लट् प्र० पु० ए०)

किससे क्या शुद्ध होता है ?

अद्भिर् गात्राणि शुद्धयन्ति मनः सत्येन शुद्धयति ।
विद्या-तपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर् ज्ञानेन शुद्धयति ॥[२]

गात्राणि अद्भिः शुद्धयन्ति	अङ्ग पानी से शुद्ध होते हैं
मनः सत्येन शुद्धयति	मन सत्य से शुद्ध होता है
भूतात्मा विद्या तपोभ्यां शुद्धयति	जीवात्मा विद्या और तप से शुद्ध होता है
बुद्धिः ज्ञानेन शुद्धयति ।	(और) बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है ।

गात्राणि (गात्र— न० प्र० ए०) अद्भिः (अप्— स्त्री० तृ० ब०) मनः (मनस्—न० प्र० ए०) भूतात्मा (भूतात्मन्— पु० प्र० ए०) विद्यातपोभ्याम् (विद्यातपस्— न० तृ० द्वि०) बुद्धिः (बुद्धि—स्त्री० प्र० ए०) शुद्धयति (शुध— दि० प० लट् प्र० पु० ए०)

१—चित्रसेन पद्मावती चरित्रम् २६६ २—मनुस्मृति ५.१०६

सज्जनों की विभूति परोपकार के लिये होती है

प्रथमा—तृतीया

रत्नाकरः किं कुरुते स्वरत्नैर् विन्ध्याचलः किं करिभिः करोति ।
श्रीखण्डखण्डैर् मलयाचलः किं परोपकाराय सतां विभूतयः ॥१

रत्नाकरः स्वरत्नैः किं कुरुते ? समुद्र अपने रत्नों से क्या करता है
विन्ध्याचलः करिभिः किं करोति ? विन्ध्य अपने हाथियों से क्या करता है
मलयाचलः श्रीखण्डखण्डैः किं करोति ? मलय चन्दन के खण्डों से क्या करता है
सतां विभूतयः परोपकाराय सज्जनों की विभूतियाँ परोपकारके लिये हैं

करिभिः (करिन्—पुं० तृ० ब) सताम् (सत्-पुंल्लिग विशेषण ष० ब०)

परोपकारियों का स्वभाव

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः नवाम्बुभिर् दूरविलम्बिनो घना ।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् ॥२

तरवः फलोद्गमैः नम्राः भवन्ति वृक्ष फलों के फर जाने से नम्र हो जाते हैं
घनाः नवाम्बुभिर् दूरविलम्बिनः मेघ नये पानी से दूर तक लटक जाते हैं
सत्पुरुषाः समृद्धिभिः अनुद्धताः सत्पुरुष समृद्धि हो जाने से उद्धत नहीं होते
एष परोपकारिणां स्वभावः एव । यह परोपकारियों का स्वभाव ही है ।

तरवः (तरु प्र० बहु०) दूरविलम्बिनः (दूरविलम्बिन् प्र० बहु०) नवाम्बुभिः (नवाम्बु-नव-अम्बु तृ० बहु०) परोपकारिणाम् (परोपकारिन्-ष० बहु०)

सन्धि— नम्रास्तरवः (नम्राः तरवः) स्वभाव एवैष (स्वभावः-एव-एष)

१—सुभाषित संग्रह २—नीतिशतक ७१

किससे कौन शोभित होता है ?

प्रथमा–तृतीया

नागो भाति मदेन कं जलरुहैः पूर्णेन्दुना शर्वरी ।
शीलेन प्रमदा जवेन तुरगो नित्योत्सवैर्मन्दिरम् ॥
वाणी व्याकरणेन हंसमिथुनैर्नद्यः सभा पण्डितैः
सत्पुत्रेण कुलं नृपेण वसुधा लोकत्रयं विष्णुना ॥[1]

नागः मदेन भाति	हाथी मद से शोभित होता है
कं जलरुहैः ,,	पानी कमलों से ,,
शर्वरी पूर्णेन्दुना ,,	रात पूर्णचन्द्रमा से ,,
प्रमदा शीलेन ,,	स्त्री शील से ,,
तुरगः जवेन ,,	घोड़ा वेग से ,,
मन्दिरं नित्योत्सवैः	घर प्रतिदिन के उत्सवों से ,,
वाणी व्याकरणेन भाति	वाणी व्याकरण से शोभित होती है
नद्यः हंसमिथुनैः भान्ति	नदियाँ हँसों के जोडे से शोभित होती हैं
सभा पण्डितैः भाति	सभा पण्डितों से शोभित होती है
कुलं सत्पुत्रेण भाति	कुल अच्छे पुत्र से शोभित होता है
वसुधा नृपेण भाति	पृथ्वी राजा से शोभित होती है (तथा)
लोकत्रयं विष्णुना भाति	तीनों लोक विष्णु से शोभित होते हैं ।

पूर्णेन्दुना (पूर्णेन्दु—पुं० तृ० ए०) नद्यः (नदी स्त्री० प्र० ब०) विष्णुना (विष्णु—पुं० तृ० ए०) भाति (भा धातु–अ० प०)

१—पञ्चरत्न १

किससे किसका नाश होता है ?

प्रथमा–चतुर्थी

हेला स्यात् कार्यनाशाय बुद्धिनाशाय निर्धनम् ।
याचना माननाशाय कुलनाशाय भोजनम् ॥[१]

हेला कार्यनाशाय स्यात्	उपेक्षा कार्य का नाशक होती है
निर्धनं बुद्धिनाशाय स्यात्	निर्धनता बुद्धिका नाशक होती है
याचना माननाशाय स्यात्	याचना सम्मान का नाश करती है
भोजनं कुलनाशाय स्यात् ।	भोजन कुल का नाश करता है ।

खल और साधु का अन्तर

विद्या विवादाय धनं मदाय शक्तिः परेषां परिपीडनाय ।
खलस्य साधोर्विपरीतमेतत् ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय ॥[२]

खलस्य विद्या विवादाय	खल की विद्या विवाद के लिये होती है
खलस्य धनं मदाय	खल का धन मद के लिये ,,
खलस्य शक्तिः परेषां परिपीडनाय	खल की शक्ति दूसरों को सताने के लिये ,,
साधोः एतत् विपरीतम् परन्तु	परन्तु साधु के लिये इससे उलटी होती हैं
साधोः विद्याः ज्ञानाय	साधु की विद्या ज्ञान के लिये होती है
साधोः धनं दानाय	साधु का धन दान के लिये होता है
साधोः शक्तिः परेषां रक्षणाय ।	साधु की शक्ति दूसरों की रक्षा के लिये

१—चाणक्यशतक ६६ २—सुभाषितसंग्रह

कौन किसमें नया यौवन ला देता है ?

प्रथमा–षष्ठी–द्वितीया

वर्षा नदीनाम्, ऋतुराट् तरूणाम्,
अर्थो नराणां पतिरङ्गनानाम् ।
न्यायप्रधानश्च नृपः प्रजानां
नवं नवं यौवनमानयन्ति ॥[१]

वर्षा नदीनाम्	वर्षा नदियों में	न्यायप्रधानः च	तथा न्यायकारी
ऋतुराट् तरूणाम्	वसन्त वृक्षों में	नृपः प्रजानाम्	शासक प्रजाओं में
अर्थः नराणाम्	अर्थ मनुष्यों में	नवं नवं यौवनम्	नई नई जवानी
पतिः अङ्गनानाम्	पति स्त्रियों में	आनयन्ति	ला देते हैं ।

ऋतुराट् (ऋतुराज्—पुं० प्र० ए०) आनयन्ति (आ–नी– भ्वा० उ० लट् प्र० पु० ब०)

कौन किसका विनाशक होता है ?

प्रथमा–षष्ठी

सेवा सुखानां व्यसनं धनानां याच्ञा गुरूणां कुनृपः प्रजानाम् ।
प्रणष्टशीलश्च सुतः कुलानां मूलावघातः कठिनः कुठारः ॥२

सेवा सुखानाम्	सेवा सुखों का	प्रनष्टशीलः च	तथा शीलहीन
व्यसनं धनानाम्	व्यसन धनों का	सुतः कुलानाम्	पुत्र कुलों का
याच्ञा गुरूणाम्	याचना बड़े लोगों का	मूलावघातः	समूल नष्ट करने वाला
कुनृपः प्रजानाम्	दुष्ट राजा प्रजाजनों का	कठिनः कुठारः	कठिन कुठार है ।

१—कथारत्नाकर २—भोज प्रबंध १००

पण्डित कौन है ?

प्रथमा—सप्तमी

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्टवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः ॥१

यः परदारेषु मातृवत् पश्यति	जो पर स्त्रियों को माता के समान देखता है
यः परद्रव्येषु लोष्टवत् पश्यति	जो परद्रव्यको मिट्टी के समान देखता है
यः सर्वभूतेषु आत्मवत् पश्यति	जो सब प्राणियों को अपने समान देखता है
स पण्डितः	वही पण्डित है, विद्वान् है ।

दारेषु (दारा–स्त्री अर्थवाचक शब्द है पर इसका सदा पुल्लिङ्ग एवं बहुवचन में प्रयोग होता है । यहां सप्तमी के बहुवचन में प्रयोग है) पश्यति (दृश धातु पश्य आदेश–भ्वा० प० लट् प्र० पु० ए०) मातृवत् (समान अर्थ में वत् प्रत्यय)

परलोक में मनुष्य के साथ कर्म ही जाते हैं

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे नारी गृहद्वारि जनः श्मशाने ।
देहश्चितायां परलोकमार्गे कर्मानुगो गच्छति जीव एकः ॥२

धनानि भूमौ तिष्ठन्ति	धन-दौलत जमीन पर रह जाती है
पशवः गोष्ठे तिष्ठन्ति	पशु घोठे में रह जाते हैं
नारी गृहद्वारि तिष्ठति	स्त्री घर के दरवाजे पर रह जाती है
जनः श्मशाने तिष्ठति	परिजन श्मशान में रह जाते हैं
देहः चितायां तिष्ठति	शरीर चिता पर रह जाती है (अतः)
परलोक—मार्गे जीवः	परलोक के मार्ग में जीवात्मा
कर्मानुगः एकः गच्छति	अपने कर्मों के साथ अकेला ही जाता है ।

१—चाणक्यशतक २—सुभाषितसंग्रह

किस को किस से वश में करना चाहिये ?

द्वितीया—तृतीया

मित्रं स्वच्छतया रिपुं नयबलैर्लुब्धं धनैरीश्वरम्
कार्येण द्विजमादरेण युवतिं प्रेम्णाऽशनैर्बान्धवान् ।
अत्युग्रं स्तुतिभिर्गुरुं प्रणतिभिर्मूर्खं कथाभिर्बुधम्
विद्याभी रसिकं रसेन सकलं शीलेन कुर्याद् वशम् ॥[1]

मित्रं स्वच्छतया वशं कुर्यात्	मित्र को स्वच्छता से वश में करना चाहिये		
रिपुं नयबलैः वशं कुर्यात्	शत्रु को नीतिबल से	"	"
लुब्धं धनैः वशं कुर्यात्	लोभी को धन से	"	"
ईश्वरं कार्येण वशं कुर्यात्	स्वामी को कार्यों से	"	"
द्विजम् आदरेण वशं कुर्यात्	ब्राह्मणको आदर से	"	"
युवतिं प्रेम्णा वशां कुर्यात्	युवती को प्रेम से	"	"
बान्धवान् अशनैः वशान् कुर्यात्	बन्धुओं को भोजन से	"	"
अत्युग्रं स्तुतिभिः वशं कुर्यात्	अति कठोर को स्तुतियों से	"	"
गुरुं प्रणतिभिः वशं कुर्यात्	गुरु को नम्रता से	"	"
मूर्खं कथाभिः वशं कुर्यात्	मूर्ख को कथाओं से	"	"
बुधं विद्याभिः वशं कुर्यात्	विद्वान को विद्याओं से	"	"
रसिकं रसेन वशं कुर्यात्	रसिक को रस से	"	"
सकलं शीलेन वशं कुर्यात् ।	सबको शील से	"	"

स्वच्छतया (स्वच्छता-स्त्री० तृ० ए०) प्रेम्णा (प्रेमन् पु० तृ० ए०) कुर्यात् (कृ—त० उ० लिङ् प्र० पु० ए०)

१—नवरत्न ।

किन बातों से मनुष्य का आदर होता है ?

तृतीया--प्रथमा

विद्यया वपुषा वाचा वस्त्रेण विभवेन च।
वकारैः पञ्चभिर् युक्तो नरो भवति पूजितः ॥१

विद्यया नरः पूजितः भवति	विद्या से मनुष्य पूजित होता है
वपुषा नरः पूजितः भवति	शरीर से मनुष्य पूजित होता है
वाचा नरः पूजितः भवति	वाणी से मनुष्य पूजित होता है
वस्त्रेण नरः पूजितः भवति	वस्त्र से मनुष्य पूजित होता है
विभवेन नरः पूजितः भवति	विभव से मनुष्य पूजित होता है
(एवं) पञ्चभिः वकारैः नरः पूजितः भवति	(इस प्रकार) पाँच वकारों से मनुष्य पूजित होता है।

विद्यया (विद्या-स्त्री० तृ० ए०) वपुषा (वपुस्–न० तृ० ए०) वाचा (वाक्-स्त्री० तृ० ए०)

क्या करने से मनुष्य क्या होता है ?

दानेन भोगी भवति मेधावी वृद्धसेवया।
अहिंसया च दीर्घायुर् इति प्राहुर् मनीषिणः ॥२

दानेन भोगी भवति	दान देने से मनुष्य सुखभोग प्राप्त करता है
वृद्धसेवया मेधावी भवति	वृद्धों की सेवा से मनुष्य मेधावी होता है
अहिंसया दीर्घायुः भवति	हिंसा न करने से मनुष्य दीर्घायु होता है
इति मनीषिणः प्राहुः।	ऐसा विद्वान लोग कहते हैं।

भोगी (भोगिन्) मेधावी (मेधाविन्) दीर्घायुः (दीर्घायुस्) मनीषिणः (मनीषिन् प्र० ब०) प्राहुः (प्र–ब्रू–आह आदेश लट् प्र० ब०) ·

१--२—सुभाषित संग्रह

किससे क्या होता है ?

तृतीया–प्रथमा

दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन स्नानेन शुद्धिर्न तु चन्दनेन ।
मानेन तृप्तिर्न तु भोजनेन ज्ञानेन मुक्तिर्न तु मण्डनेन ॥१

दानेन पाणिः न तु कङ्कणेन	दान से हाथ शोभित होता है कंकण से नहीं
स्नानेन शुद्धिः न तु चन्दनेन	स्नान से शुद्धि होती है चन्दन से नहीं
मानेन तृप्तिः न तु भोजनेन	सम्मान से तृप्ति होती है भोजन से नहीं
ज्ञानेन मुक्तिः न तु मण्डनेन ।	ज्ञान से मुक्ति होती है मण्डन से नहीं ।

किसके विना क्या अच्छा नहीं लगता ?

अङ्गेन गात्रं नयनेन वक्त्रं न्यायेन राज्यं लवणेन भोज्यम् ।
धर्मेण हीनं खलु जीवितं च न राजते चन्द्रमसा विना निशा ॥२

अङ्गेन हीनं गात्रं न राजते	अङ्ग से हीन शरीर शोभित नहीं होता
नयनेन हीनं वक्त्रं न राजते	नेत्र से हीन मुख शोभित नहीं होता
न्यायेन हीनं राज्यं न राजते	न्याय से हीन राज्य शोभित नहीं होता
लवणेन हीनं भोज्यं न राजते	नमक से हीन भोजन अच्छा नहीं लगता
धर्मेण हीनं जीवितं न राजते	धर्म से हीन जीवन अच्छा नहीं होता
चन्द्रमसा विना निशा न राजते	चन्द्रमा के विना रात अच्छी नहीं लगती ।

चन्द्रमसा (चन्द्रमस्—पु० तृ० ए०) राजते (राज–भ्वा० उ० लट् प्र० पु० ए०)

१—चाणक्यनीति १७. १८ २—भर्तृहरिसुभाषित संग्रह ९५६

किस से किसकी शोभा होती है ?

तृतीया--प्रथमा

पयसा कमलं कमलेन पयः, पयसा कमलेन विभाति सरः
मणिना वलयं वलयेन मणिर्, मणिना वलयेन विभाति करः
शशिना च निशा निशया च शशी, शशिना निशया च विभाति नभः ।
भवता च सभा सभया च भवान्, भवता सभया च सदस्यगणः ॥[१]

पयसा कमलं कमलेन पयः	पानी से कमल तथा कमल से पानी (और)
पयसा तथा कमलेन सरः विभाति	पानी तथा कमल से सरोवर शोभित होता है
मणिना वलयम्, वलयेन मणिः	मणि से वलय तथा वलय से मणि (और)
मणिना तथा वलयेन करः विभाति	मणि तथा वलय से कर सुशोभित होता है
शशिना निशा, निशया च शशी	शशी से निशा तथा निशा से शशी (और)
शशिना तथा निशया च नभः विभाति	शशी तथा निशा से आकाश सुशोभित होता है
भवता सभा सभया च भवान्	आप से सभा तथा सभा से आप (तथा)
भवता तथा सभया च सदस्यगणः विभाति	आप से और सभा से सदस्यगण शोभित होते हैं ।

पयसा (पयस्—न० तृ० ए०) पयः (पयस्—न० प्र० ए०) सरः (सरस्—न० प्र० ए०) शशिना (शशिन्—पु० तृ० ए०) शशी (शशिन्—पु० प्र० ए०) निशया (निशा—स्त्री० तृ० ए०) नभः (नभस्—न० प्र० ए०) भवता (भवत्—पु० तृ० ए०) सभया (सभा—स्त्री० तृ० ए०) भवान् (भवत्—पु० प्र० ए०) विभाति (वि-भा-अ० प० लट् प्र० पु० ए०)

१—समयोचित पद्यमालिका

किस से क्या प्राप्त होता है ?

तृतीया--द्वितीया

बुद्ध्या भयं प्रणुदति तपसा विन्दते महत् ।
गुरुशुश्रूषया ज्ञानं शान्तिं योगेन विन्दति ॥१

बुद्ध्या भयं प्रणुदति	बुद्धि से भय को दूर करता है
तपसा महत् विन्दते	तप से महान् वस्तु प्राप्त करता है
गुरु-शुश्रूषया ज्ञानं विन्दते	गुरुसेवा से ज्ञान प्राप्त करता है (और)
योगेन शान्तिं विन्दति ।	योग से शान्ति प्राप्त करता है ।

प्रणुदति (प्र–नुद-तु० उ० लट् प्र० पु० ए०) विन्दति, विन्दते (विद्—तु० उ० लट् प्र० पु० ए०)

वे लोग निश्चय ही मूर्ख हैं !

दम्भेन मैत्रीं कपटेन धर्मं सुखेन विद्यां परुषेण नारीम् ।
परोपतापेन समृद्धिभावं वाञ्छन्ति ये व्यक्तमपण्डितास्ते ॥२

ये दम्भेव मैत्रीं वाञ्छन्ति	जो दम्भ से मैत्री रखना चाहते हैं
ये कपटेन धर्मं वाञ्छन्ति	जो कपट से धर्म करना चाहते हैं
ये सुखेन विद्यां वाञ्छन्ति	जो सुख से विद्या प्राप्त करना चाहते हैं
ये परुषेण नारीं वाञ्छन्ति	जो क्रूरता से स्त्री को वश में रखना ,,
ये परोपतापेन समृद्धिभावम् ,,	जो दूसरों को दबाकर धन बढ़ाना चाहते हैं
ते व्यक्तम् अपण्डिताः ।	वे निश्चय ही मूर्ख हैं, बुद्धिहीन हैं ।

वाञ्छन्ति (वाञ्छ्—भ्वा० प० लट् प्र० पु० ए०)

१—विदुरनीति ३६-५२ २—कथारत्नाकर ४०

कौन पुरुष वन्दनीय होता है ?

चतुर्थी--प्रथमा

दानाय लक्ष्मीः सुकृताय विद्या चिन्ता परब्रह्म-विनिश्चयाय ।
परोपकाराय वचांसि यस्य वन्द्यस्त्रिलोकीतिलकः स एव ॥१

दानाय यस्य लक्ष्मीः भवति	दान के लिये जिसकी लक्ष्मी होती है
सुकृताय यस्य विद्या भवति	सत्कर्म के लिये जिसकी विद्या होती है
परब्रह्म-विनिश्चयाय यस्य चिन्ता	परब्रह्म के ज्ञान के लिये जिसकी चिन्ता हैं
परोपकाराय यस्य वचांसि	परोपकार के लिये जिसके वचन होते हैं
स एव त्रिलोकीतिलकः वन्द्यः	वही पुरुष त्रिलोकीतिलक है और वन्दनीय है।

वचांसि (वचस्—न० प्र० ब० वचः वचसी वचांसि)

परोपकार का महत्त्व

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः ।
परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकारार्थमिदं शरीरम् ॥२

परोपकाराय वृक्षाः फलन्ति	परोपकार के लिये वृक्ष फलते हैं
परोपकाराय नद्यः वहन्ति	परोपकार के लिये नदियाँ बहती हैं
परोपकाराय गावः दुहन्ति	परोपकार के लिये गायें दूध देती हैं
परोपकारार्थम् इदं शरीरम्	परोपकार के लिये यह शरीर है।

फलन्ति वहन्ति (फल, वह—भ्वा० प०, उ०, लट् प्र० पु० ब०) दुहन्ति (दुह—अ० उ० लट् प्र० पु० ब०—दोग्धि दुग्धः दुहन्ति)

१—शार्ङ्गधरपद्धति २—सुभाषित संग्रह

लोभ ही पाप का कारण है

पञ्चमी--प्रथमा

लोभात् क्रोधः प्रभवति लोभात् कामः प्रजायते ।
लोभात् मोहश्च नाशश्च लोभः पापस्य कारणम् ॥[१]

लोभात्	क्रोधः	प्रभवति	लोभ से क्रोध उत्पन्न होता है
लोभात्	कामः	प्रजायते	लोभ से काम की उत्पत्ति होती है
लोभात्	मोहः च नाशः च	,,	लोभ से ही मोह और नाश होता है अतः
लोभः	पापस्य	कारणम्	लोभ पाप का—पतन का कारण है ।

प्रजायते (प्र०—जन—दि० आ० लट् प्र० पु० ए०)

आलापात् गात्रसम्पर्कात् संसर्गात् सहभोजनात् ।
आसनात् शयनात् यानात् पापं संक्रमते नृणाम् ॥[२]

आलापात्—	बातचीत करने से	शयनात्—	एक साथ सोने से
गात्रसम्पर्कात्—	शरीर के स्पर्श से	यानात्—	एक साथ चलने से
संसर्गात्—	संसर्ग से	नृणां पापम्—	मनुष्यों का पाप
सहभोजनात्—	एक साथ खाने से	संक्रमते—	संक्रान्त हो जाता है
आसनात्—	एक साथ बैठने से		एक का दूसरे पर चला जाता है ।

संक्रमते (सम्—क्रम—भ्वा० उ० लट् प्र० पु० ए०) नृणाम् (नृ—पु० ष० ब०)

१—हितोपदेश १. २७ २—शौनकीयनीतिसार ६

पञ्चमी–प्रथमा

किस से क्या होता है ?

सङ्गात् सञ्जायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते ।
क्रोधाद् भवति संमोहः संमोहात् स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ॥१

सङ्गात् कामः सञ्जायते	सङ्ग से काम उत्पन्न होता है
कामात् क्रोधः अभिजायते	काम से क्रोध उत्पन्न होता है
क्रोधात् संमोहः भवति	क्रोध से मोह उत्पन्न होता है
संमोहात् स्मृतिविभ्रमः भवति	मोह से स्मृतिविभ्रम हो जाता है
स्मृतिभ्रंशात् बुद्धिनाशः भवति	स्मृतिभ्रंश से बुद्धिनाश हो जाता है और
बुद्धिनाशात् (मनुष्यः) प्रणश्यति ।	बुद्धिनाश से मनुष्य का नाश हो जाता है ।

किस से कौन श्रेष्ठ होता है ?

अज्ञेभ्यो ग्रन्थिनः श्रेष्ठाः ग्रन्थिभ्यो धारिणो वराः ।
धारिभ्यो ज्ञानिनः श्रेष्ठाः ज्ञानिभ्यो व्यवसायिनः ॥२

अज्ञेभ्यः ग्रन्थिनः श्रेष्ठाः	मूर्खों से ग्रन्थ पढ़ने वाले श्रेष्ठ हैं
ग्रन्थिभ्यः धारिणः वराः	पढ़ने वालों से धारण करने वाले श्रेष्ठ हैं
धारिभ्यः ज्ञानिनः श्रेष्ठाः	धारण करने वालों से ज्ञानी श्रेष्ठ हैं
ज्ञानिभ्यः व्यवसायिनः श्रेष्ठाः ।	ज्ञानियों से आचरण करने वाले श्रेष्ठ हैं ।

ग्रन्थिनः धारिणः ज्ञानिनः व्यवसायिनः (ग्रन्थिन् धारिन् ज्ञानिन् व्यवसायिन्—पुंल्लिङ्ग विशेषण प्र० ब०) ग्रन्थिभ्यः धारिभ्यः ज्ञानिभ्यः (प० ब०)

१—भगवद्गीता २, ६२, ६३, २—मनुस्मृति १२, १०३,

४

पञ्चमी-प्रथमा

उत्तम वस्तुओं का संग्रह सब ओर से करना चाहिये

विषादप्यमृतं ग्राह्यम् अमेध्यादपि काञ्चनम् ।
नीचादप्युत्तमा विद्या स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि ॥१

विषात् अपि अमृतं ग्राह्यम्	विष से भी अमृत ले लेना चाहिये
अमेध्यात् अपि काञ्चनं ग्राह्यम्	गन्दे स्थान से भी सुवर्ण ले लेना चाहिये
नीचात् अपि उत्तमा विद्या ग्राह्या	नीच से भी उत्तम विद्या ले लेनी चाहिये
दुष्कुलात् अपि स्त्रीरत्नं ग्राह्यम् ।	नीच कुलसे भी उत्तम स्त्री ले लेनी चाहिये ।

अपि (अव्यय) ग्राह्यं ग्राह्या (ग्राह्य—ग्रह-ण्यत्, न० स्त्री०, प्र० ए०)

अन्यायवादी नरकगामी होता है

मानाद् वा यदि वा क्रोधाल्लोभाद् वा यदि वा भयात् ।
यो न्यायमन्यथा ब्रूते स याति नरकं नरः ॥२

मानात् वा यदि वा क्रोधात्	अभिमान से अथवा क्रोध से
लोभात् वा यदि वा भयात्	लोभ से अथवा भय से
यः न्यायम् अन्यथा ब्रूते	जो न्याय के विपरीत बोलता है
स नरः नरकं याति ।	वह मनुष्य नरक जाता है ।

वा यदि अन्यथा (अव्यय) ब्रूते (ब्रू—अ० उ० लट् प्र० पु० ए०—ब्रवीति ब्रूतः ब्रुवन्ति, ब्रूते ब्रुवाते ब्रुवते)

१—सुभाषितसंग्रह

२—पञ्चतन्त्र ३, १०४

पञ्चमी-प्रथमा

किस बात से कौन विनष्ट हो जाता है ?

दुर्मन्त्रान्नृपतिर्विनश्यति यतिः सङ्गात् सुतो लालनात्
विप्रोऽनध्ययनात् कुलं कुतनयात् शीलं खलोपासनात् ।
मैत्री चाऽप्रणयात् समृद्धिरनयात् स्नेहः प्रवासाश्रयात्
ह्रीर्मद्यादनवेक्षणादपि कृषिस्त्यागात् प्रमादाद्धनम् ॥[१]

दुर्मन्त्रात् नृपतिः विनश्यति	दुर्मन्त्र से नृपति नष्ट हो जाता है
सङ्गात् यतिः विनश्यति	सङ्ग से साधु नष्ट हो जाता है
लालनात् सुतः विनश्यति	लाड़-प्यार से पुत्र नष्ट हो जाता है
अनध्ययनात् विप्रः विनश्यति	न पढ़ने से ब्राह्मण नष्ट हो जाता है
कुतनयात् कुलं विनश्यति	कुपुत्र से कुल नष्ट हो जाता है
खलोपासनात् शीलं विनश्यति	दुष्टों के साथ से शील नष्ट हो जाता है
अप्रणयात् मैत्री विनश्यति	अस्नेह से मैत्री नष्ट हो जाती है
अनयात् समृद्धिः विनश्यति	अनीति से समृद्धि नष्ट हो जाती है
प्रवासाश्रयात् स्नेहः विनश्यति	प्रवास से स्नेह नष्ट हो जाता है
मद्यात् ह्रीः विनश्यति	मद्यपान से लज्जा नष्ट हो जाती है
अनवेक्षणात् कृषिः विनश्यति	न देखने से कृषि नष्ट हो जाती है
त्यागात् प्रमादात्	(तथा) त्याग (एवं) प्रमाद से
धनं विनश्यति	धन विनष्ट हो जाता है ।

विनश्यति (वि—नश—दि० प० लट् प्र० पु० ए०)

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार

षष्ठी-प्रथमा

किस का क्या भूषण है ?

हस्तस्य भूषणं दानं सत्यं कण्ठस्य भूषणम् ।
श्रोत्रस्य भूषणं शास्त्रं भूषणैः किं प्रयोजनम् ॥[१]

हस्तस्य भूषणं दानम्	हाथ का भूषण दान है
कण्ठस्य भूषणम् सत्यम्	कण्ठ का भूषण सत्य है
श्रोत्रस्य भूषणम् शास्त्रम्	कान का भूषण शास्त्र है
भूषणैः प्रयोजनम् किम् ?	(फिर अन्य) भूषणों से मतलब क्या ?

किस का क्या रस है ?

पानीयस्य रसः शैत्यं भोजनस्यादरो रसः ।
आनुकूल्यं रसः स्त्रीणां मित्रस्य वचनं रसः ॥ [२]

पानीयस्य रसः शैत्यम्	पानी का रस शीतलता है
भोजनस्य रसः आदरः	भोजन का रस आदर है
स्त्रीणां रसः आनुकूल्यम्	स्त्रियों का रस अनुकूलता है (तथा)
मित्रस्य रसः वचनम् ।	मित्र का रस प्रिय वचन है ।

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार २—प्रियङ्करनृपकथा ९१

षष्ठी--प्रथमा

किस का क्या बल है ?

दुर्बलस्य बलं राजा बालानां रोदनं बलम् ।
बलं मूर्खस्य मौनित्वं चौराणामनृतं बलम् ॥[1]

दुर्बलानां बलं राजा (भवति)	दुर्बलों का बल राजा है
बालानां बलं रोदनं (भवति)	बालकों का बल रोना है
मूर्खस्य बलं मौनित्वं (भवति)	मूर्खों का बल मौन है तथा
चौराणां बलम् अनृतं (भवति ।)	चोरों का बल झूठ बोलना है ।

किस का क्या व्यर्थ होता है ?

व्यर्थं श्रुतमशीलस्य धनं कृपणजीविनः ।
उत्साहो मन्दभाग्यस्य बलं कापुरुषस्य च ॥[2]

अशीलस्य श्रुतं व्यर्थम्	शीलहीन व्यक्तिका अध्ययन व्यर्थ है
कृपणजीविनः धनं व्यर्थम्	कृपण व्यक्ति का धन व्यर्थ है
मन्दभाग्यस्य उत्साहः व्यर्थः	भाग्यहीन व्यक्ति का उत्साह व्यर्थ है तथा
कापुरुषस्य बलं व्यर्थम् ।	कायर पुरुष का बल व्यर्थ है ।

१—चाणक्यशतक ६८   २ समयोचितपद्यमालिका

षष्ठी--प्रथमा

किस का क्या आभरण है

नरस्याऽभरणं रूपं रूपस्याऽभरणं गुणः ।
गुणस्याऽभरणं ज्ञानं ज्ञानस्याऽभरणं क्षमा ॥१

वरस्य आभरणं रूपम्	नर का आभरण रूप है
रूपस्य आभरणं गुणः	रूप का आभरण गुण है
गुणस्य आभरणं ज्ञानम्	गुण का आभरण ज्ञान है (और)
ज्ञावस्य आभरणं क्षमा ।	ज्ञान का आभरण क्षमा है ।

आलस्य के दुष्परिणाम

अलसस्य कुतो विद्या अविद्यस्य कुतो धनम् ।
अधनस्य कुतो मित्रम् अमित्रस्य कुतः सुखम् ॥२

अलसस्य विद्या कुतः	आलसी मनुष्य को विद्या कहाँ ?
अविद्यस्य धनं कुतः	विद्याहीन मनुष्य को धन कहाँ ?
अधनस्य मित्रं कुतः	निर्धन मनुष्य को मित्र कहाँ ?
अमित्रस्य सुखं कुतः	मित्रहीन मनुष्य को सुख कहाँ ?

षष्ठी—प्रथमा

किस के लिए क्या तृण है ?

उदारस्य तृणं वित्तं शूरस्य मरणं तृणम् ।
विरक्तस्य तृणं भार्या निःस्पृहस्य तृणं जगत् ॥1

उदारस्य वित्तं तृणं (भवति)	उदार के लिये धन तृण के समान है
शूरस्य मरणं तृणं (भवति)	शूर के लिये मृत्यु तृण के समान है
विरक्तस्य भार्या तृणं (भवति)	विरक्त के लिए स्त्री तृण के समान है
निःस्पृहस्य जगत् तृणं (भवति) ।	निस्पृह के लिये संसार तृण के समान है ।

जगत् (न॰ प्र॰ ए॰ जगत् जगती जगन्ति)

किस के लिए कौन मित्र होता है ?

सार्थः प्रवसतो मित्रं भार्या मित्रं गृहे सतः ।
आतुरस्य भिषङ् मित्रं दानं मित्रं मरिष्यतः ॥2

प्रवसतः सार्थः मित्रम्	प्रवासी का साथी मित्र होता है
गृहे सतः भार्या मित्रम्	घर में रहने वाले का स्त्री मित्र होती है
आतुरस्य भिषङ् मित्रम्	आतुर (रोगी) का वैद्य मित्र होता है
मरिष्यतः दानं मित्रम् ।	मरने वाले का दान मित्र होता है ।

प्रवसतः (प्रवसत्-पुल्लिङ्ग विशेषण—ष॰ ए॰) सतः (सत्-पु॰ वि॰ ष॰ ए॰) मरिष्यतः (मरिष्यत्-पु॰ वि॰ ष॰ ए॰) भिषग् (भिषज् पु॰ प्र॰ ए॰)

1—2—सुभाषितरत्नभाण्डागार

षष्ठी—प्रथमा

किस का कौन शत्रु होता है ?

लुब्धानां याचकः शत्रुः मूर्खाणां बोधको रिपुः ।
जारस्त्रीणां पतिः शत्रुः चोराणांचन्द्रमा रिपुः ॥१

लुब्धानां याचकः शत्रुः	लोभियों के लिये याचक शत्रु होता है
मूर्खाणां बोधकः रिपुः	मूर्खों के लिये बोधक शत्रु होता है
जारस्त्रीणां पतिः शत्रुः	कुलटाओं के लिये पति शत्रु होता है
चौराणां चन्द्रमाः रिपुः	चोरों के लिये चन्द्रमा शत्रु होता है ।

चन्द्रमाः (चन्द्रमस्—पु॰ प्र॰ ए॰ चन्द्रमाः चन्द्रमसौ चन्द्रमसः)

किस के कौन शत्रु होते हैं ?

मूर्खाणां पण्डिता द्वेष्या निर्धनानां महाधनाः ।
व्रतिनः पापशीलानाम् असतीनां कुलस्त्रियः ॥२

मूर्खाणां पण्डिताः द्वेष्याः	मूर्खों के लिये विद्वान् शत्रु होते हैं
निर्धनानां महाधनाः द्वेष्याः	निर्धनों के लिये बड़े २ धनवान शत्रु होते हैं
पापशीलानां व्रतिनः द्वेष्याः	पापियों के लिये सदाचारी शत्रु होते हैं
असतीनां कुलस्त्रियः द्वेष्याः	कुलटाओंके लिये कुलीनस्त्रियाँ शत्रु होती हैं ।

व्रतिनः (व्रतिन्—पु॰ विशेषण प्र॰ ए॰) कुलस्त्रियः (कुलस्त्री—स्त्री-प्र॰ ब॰)

१—२—सुभाषितरत्नभाण्डागार

षष्ठी--प्रथमा

किस का क्या भूषण है ?

तारणां भूषणं चन्द्रो नारीणां भूषणं पतिः ।
पृथिव्या भूषणं राजा विद्या सर्वस्य भूषणम् ॥१

ताराणां चन्द्रः भूषणम्	ताराओं का चन्द्रमा भूषण है
नारीणां पतिः भूषणम्	नारियों का पति भूषण है
पृथिव्याः राजा भूषणम्	पृथिवी का राजा भूषण है तथा
सर्वस्य विद्या भूषणम्	सब का विद्या भूषण है ।

कौन गुण किस मनुष्य को स्वर्ग पहुँचाता है ?

दानं दरिद्रस्य विभोश्च शान्तिः यूनां तपो ज्ञानवतां च मौनम् ।
इच्छानिवृत्तिश्च सुखान्वितानां दया च भूतेषु दिवं नयन्ति ॥२

दरिद्रस्य दानम्	दरिद्र का दान	सुखान्वितानाम्	सुखी लोगों की
विभोः शान्तिः	समर्थ की शान्ति	इच्छानिवृत्तिः	सुखेच्छा से निवृत्ति
यूनां तपः	जवानों का तप	च भूतेषु दया	और प्राणियों पर दया
ज्ञानवतां मौनम्	ज्ञानियों का मौन	दिवं नयन्ति	मनुष्य को स्वर्ग ले जाते हैं।

विभोः (विभु–ष० ए०) यूनां (युवन्–ष० ब०) ज्ञानवताम् (ज्ञानवत्–ष० ब०) दिवम् (दिव्–द्वि० ए०) तपः (तपस् प्र० ए०)

१—चाणक्यशतकम्. ८.   २—सुभाषितरत्नभाण्डागार

षष्ठी–प्रथमा

किस का क्या लक्षण है

अश्वस्य लक्षणं वेगो मदो मातङ्ग-लक्षणम् ।
चातुर्यं लक्षणं नार्या उद्योगो नर-लक्षणम् ॥[१]

अश्वस्य लक्षणं वेगः	घोड़े का लक्षण वेग है
मातङ्ग-लक्षणं मदः	हाथी का लक्षण मद है
नार्याः लक्षणं चातुर्यम्	नारी का लक्षण चतुराई है (और)
नर-लक्षणम् उद्योगः ।	पुरुष का लक्षण उद्योग है ।

मातङ्गलक्षणम् (मातङ्गस्य लक्षणम्) नरलक्षणम् (नरस्य लक्षणम्)

किस में कौन बात नहीं होती

सद्भावो नास्ति वेश्यानां स्थिरता नास्ति सम्पदाम् ।
विवेको नास्ति मूर्खाणां विनाशो नास्ति कर्मणाम् ॥[२]

वेश्यानां सद्भावः नास्ति	वेश्याओं में सच्चरित्र नहीं होता
सम्पदां स्थिरता नास्ति	सम्पत्तियों में स्थिरता नहीं होती
मूर्खाणां विवेकः नास्ति	मूर्खों को विवेक नहीं होता (तथा)
कर्मणां विनाशः नास्ति	कर्मों का विनाश नहीं होता ।

सम्पदाम् (सम्पद्–स्त्री० ष० ब०) कर्मणाम् (कर्मन्–न० ष० ब०)

१—२—समयोचितपद्यमालिका

षष्ठी—प्रथमा

किसका क्या नष्ट होता है ?

लुब्धस्य नश्यति यशः पिशुनस्य मैत्री
नष्टक्रियस्य कुलमर्थपरस्य धर्मः ।
विद्याफलं व्यसनिनः कृपणस्य सौख्यं
राज्यं प्रमत्तसचिवस्य नराधिपस्य ॥[१]

लुब्धस्य यशः नश्यति	लोभी का यश नष्ट हो जाता है
पिशुनस्य मैत्री नश्यति	पिशुन की मित्रता नष्ट हो जाती है
नष्टक्रियस्य कुलं नश्यति	निष्क्रिय का कुल नष्ट हो जाता है
अर्थपरस्य धर्मः नश्यति	अर्थ-परायण का धर्म नष्ट हो जाता है
व्यसनिनः विद्याफलं नश्यति	व्यसनीका विद्याफल नष्ट हो जाता है
कृपणस्य सौख्यं नश्यति	कृपण का सुख नष्ट हो जाता है (तथा)
प्रमत्तसचिवस्य नराधिपस्य	प्रमत्त मन्त्री वाले शासक का
राज्यं नश्यति	राज्य नष्ट हो जाता है ।

आतुर लोगों की दुरवस्था

अर्थातुराणां न गुरुर्न बन्धुः कामातुराणां न भयं न लज्जा ।
विद्यातुराणां न सुखं न निद्रा क्षुधातुराणां न रुचिर्न वेला ॥[२]

अर्थातुराणां न गुरुः न बन्धुः	अर्थातुरों का न (कोई) बन्धु होता है न गुरु
कामातुराणां न भयं न लज्जा	कामातुरों को न (कोई) भय होता है न लज्जा
विद्यातुराणां न सुखं न निद्रा	विद्यातुरों को न (कोई) सुख है न निद्रा तथा
क्षुधातुराणां न रुचिः न वेला	क्षुधातुरों को न (कोई) रुचि होती न कोई समय
	अर्थात् भूखे लोग किसी समय कुछ भी खा सकते हैं ।

१—पञ्चतन्त्रम् २—चाणक्यनीति ८-१४

षष्ठी—प्रथमा

किसका क्या भूषण है ?

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता शौर्यस्य वाक्संयमः
ज्ञानस्योपशमः कुलस्य विनयो वित्तस्य पात्रे व्ययः ।
अक्रोधस्तपसः क्षमा बलवतां धर्मस्य निर्व्याजता
सर्वेषामपि सर्वकारणमिदं शीलं परं भूषणम् ॥[१]

ऐश्वर्यस्य विभूषणं सुजनता	ऐश्वर्य का भूषण सज्जनता है
शौर्यस्य विभूषणं वाक्संयमः	शौर्य का भूषण वाणी का संयम है
ज्ञानस्य विभूषणम् उपशमः	ज्ञान का भूषण शान्ति है
कुलस्य विभूषणं विनयः	कुल का भूषण विनय है
वित्तस्य विभूषणं पात्रे व्ययः	धन का भूषण सत्पात्र में व्यय है
तपसः विभूषणम् अक्रोधः	तप का भूषण अक्रोध है
बलवतां विभूषणं क्षमा	बलवानों का भूषण क्षमा है
धर्मस्य विभूषणं निर्व्याजता	धर्म का भूषण निष्कपटता है तथा
सर्वेषाम् अपि सर्वकारणम्	इन सब के सभी भूषणों का कारण
इदं शीलं परं भूषणम् ।	यह शील सब से उत्तम भूषण है ।

किसका क्या फल है ?

बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणं च देहस्य सारः व्रतधारणं च ।
अर्थस्य सारः किल पात्रदानं वाचः फलं प्रीतिकरं नराणाम् ॥[२]

बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणम्	बुद्धि का फल तत्त्व का विचार है
देहस्य सारः व्रतधारणम्	देह का सार व्रतों का धारण है
अर्थस्य सारः पात्रदानम्	अर्थ का सार सत्पात्रों को दान है तथा
वाचः फलं नराणां प्रीतिकरम्	वाणी का फल मनुष्यों को प्रसन्न करना है ।

१—नीतिशतकम् ४१ २—उपदेशतरङ्गिणी ५-१

षष्ठी-प्रथमा

किसमें कौन बात नहीं होती ?

गृहासक्तस्य नो विद्या न दया मांसभोजिनः ।
द्रव्यलुब्धस्य नो सत्यं स्त्रैणस्य न पवित्रता ॥१

गृहासक्तस्य	विद्या	न	गृह में आसक्त जन को विद्या नहीं आती
मांसभोजिनः	दया	न	मांस खाने वाले को दया नहीं होती,
द्रव्यलुब्धस्य	सत्यं	न	द्रव्य के लोभी को सच्चाई नहीं होती तथा
स्त्रैणस्य	पवित्रता	न	स्त्री में आसक्त जन में पवित्रता नहीं होती ।

मांसभोजिनः (मांसभोजिन्—पु० विशेषण ष० ए०)

षष्ठी-तृतीया

किन बातों से दुःख भोगना पड़ता है ?

अनभ्यासेन विद्यानाम् असंसर्गेण धीमताम् ।
अनिग्रहेण चाऽक्षाणां व्यसनं जायते महत् ॥२

विद्यानाम्	अनभ्यासेन	विद्याओं का अभ्यास न करने से
धीमताम्	असंसर्गेण	बुद्धिमानों की सङ्गति न करने से
च अक्षाणाम्	अनिग्रहेण	तथा इन्द्रियों का निग्रह न करने से
महत्	व्यसनं जायते ।	भारी दुःख भोगना पड़ता है ।

धीमताम् (धीमत्–पुंलिङ्ग विशेषण–ष० ब०) महत् (महत्– न० प्र० ए०)

१—चाणक्यनीति २—सुभाषित रत्नभाण्डागार

सप्तमी–प्रथमा

कौन बन्धु है ?

उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे ।
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः ॥१

उत्सवे यः तिष्ठति स बान्धवः	उत्सव में जो उपस्थित रहता है वह बन्धु है
व्यसने यः तिष्ठति स बान्धवः	संकट में जो उपस्थित रहता है वह बन्धु है
दुर्भिक्षे यः तिष्ठति स बान्धवः	दुर्भिक्ष में जो उपस्थित रहता है वह बन्धु है
राष्ट्रविप्लवे यः तिष्ठति स बान्धवः	राष्ट्रमें विप्लवके समय जो उपस्थित ,, ,, ,,
राजद्वारे यः तिष्ठति स बान्धवः	राजदरबार में जो उपस्थित रहता है वह बन्धु है
श्मशाने यः तिष्ठति स बान्धवः	श्मशान में जो उपस्थित रहता है वह बन्धु है।

तिष्ठति (स्था–तिष्ठ आदेश लट् प्र० पु० ए०)

सब चीजें सब जगह नहीं होतीं ?

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे ।
साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने ॥२

शैले शैले माणिक्यं न	प्रत्येक पर्वत पर माणिक्य नहीं होता
गजे गजे मौक्तिकं न	प्रत्येक हाथी में मुक्ता नहीं होती
वने वने चन्दनं न	प्रत्येक वन में चन्दन नहीं होता तथा
सर्वत्र साधवः नहि	सब जगह सज्जन पुरुष नहीं मिलते ।

१—चाणक्यशतक २—चाणक्यशतक

कहाँ क्या धन होता है ?

विदेशेषु धनं विद्या व्यसनेषु धनं मतिः ।
परलोके धनं धर्मः शीलं सर्वत्र वै धनम् ॥[१]

विदेशेषु धनं विद्या	विदेशों के लिये धन विद्या है
व्यसनेषु धनं मतिः	संकटकाल के लिये धन सद्बुद्धि है
परलोके धनं धर्मः	परलोक के लिये धन धर्म है (परन्तु)
शीलं सर्वत्र धनम्	शील सब जगह के लिये धन है ।

सर्वत्र (अव्यय) वै (अव्यय—निश्चयार्थक)

चतुर्थ अवस्था में कुछ काम नहीं होता

प्रथमे नार्जिता विद्या द्वितीये नार्जितं धनम् ।
तृतीये नार्जितं पुण्यं चतुर्थे किं करिष्यसि ।।[२]

प्रथमे विद्या न अर्जिता	प्रथम अवस्था में विद्या नहीं कमाई
द्वितीये धनं न अर्जितम्	द्वितीय अवस्था में धन नहीं कमाया
तृतीये पुण्यं न अर्जितम्	तृतीय अवस्था में पुण्य नहीं कमाया (तो)
चतुर्थे किं करिष्यसि ?	चतुर्थ अवस्था में क्या करोगे ?

किम् (प्रश्नार्थक अव्यय) करिष्यसि (कृ० त० उ० लृट् प्र० पु० ए०) प्रथमे द्वितीये तृतीये तथा चतुर्थे इन विशेषणों के साथ "वयसि" यह विशेष्य जोड़ देना चाहिये ।

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार   २—चाणक्यशतक

सप्तमी—प्रथमा

कहाँ किस की परीक्षा होती है ?

आपदि मित्र-परीक्षा शूर-परीक्षा रणाङ्गणे भवति।
विनये वंश-परीक्षा स्त्रियः परीक्षा च निर्धने पुंसि ॥१

आपदि मित्रपरीक्षा भवति आपत्ति में मित्रकी परीक्षा होती है
रणाङ्गणे शूरपरीक्षा भवति लड़ाई के मैदान में शूर की परीक्षा होती है
विनये वंशपरीक्षा भवति विनय में वंश की परीक्षा होती है तथा
च निर्धने पुंसि स्त्रियः परीक्षा ,, पति की गरीबीमें स्त्री की परीक्षा होती है।

आपदि (आपद्—स्त्री० स० ए०) स्त्रियः (स्त्री—स्त्री० ष० ए०) पुंसि (पुमस्—पु० स० ए०) तु (अव्यय)

विद्वान की महत्ता

स्वगृहे पूजितो मूर्खः स्वग्रामे पूजितः प्रभुः।
स्वदेशे पूजितो राजा विद्वान् सर्वत्र पूजितः ॥२

स्वगृहे मूर्खः पूजितः अपने घर में मूर्ख आदर पाता है
स्वग्रामे प्रभुः पूजितः अपने गाँव में मालिक आदर पाता है
स्वदेशे राजा पूजितः अपने देश में राजा आदर पाता है (और)
सर्वत्र विद्वान् पूजितः सर्वत्र विद्वान् आदर पाता है।

राजा (राजन्—पुं० प्र० ए० राजा राजानौ राजानः) विद्वान् (विद्वस् पुं० विशेषण प्र० ए०) विद्वान् विद्वांसौ विद्वांसः) सर्वत्र (अव्यय)।

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार २—भर्तृहरिसुभाषितसंग्रह ८११

सप्तमी-प्रथमा

महापुरुषों का स्वभाव

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ ।
सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् ॥[१]

विपदि धैर्यम्—विपत्ति में धैर्य
अभ्युदये क्षमा—अभ्युदय में क्षमा
यशसि अभिरुचिः-यश में अभिरुचि
श्रुतौ व्यसनम्—शास्त्र में व्यसन
सदसि वाक्पटुता—सभा में वाक्पटुता
युधि विक्रमः—युद्ध में पराक्रम
इदं महात्मनाम्—यह बातें महापुरुषों की
प्रकृतिसिद्धम्— स्वभावसिद्ध होती हैं।

विपदि विपद्—स्त्री० स० ए०) (यशसि यशस्—न० स० ए०) श्रुतौ (श्रुति-स्त्री० स० ए०) सदसि (सदस्—न० स० ए०) युधि (युध्—स्त्री० स० ए०). महात्मनाम् महात्मन्—पु० ष० ब०) इदम् (इदम्—न० पु० ए०)

किन में कौन वस्तु श्रेष्ठ है ?

पुष्पेषु चम्पा नगरीषु लङ्का नदीषु गङ्गा च नृपेषु रामः ।
नारीषु रम्भा पुरुषेषु विष्णुः काव्येषु माघः कवि-कालिदासः ॥[२]

पुष्पेषु चम्पा—पुष्पों में चम्पा
नगरीषु लङ्का—नगरियो में लंका
नदीषु गङ्गा—नदियों में गंगा
नृपेषु रामः—राजाओं में राम
नारीषु रम्भा—नारियों में रम्भा
पुरुषेषु विष्णुः—पुरुषों में विष्णु
काव्येषु माघः—काव्यों में माघ (तथा)
कविकालिदासः—कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं।

कविकालिदासः (कविषु-कालिदासः)

१—नीतिशतक ६१
२—भोजप्रबन्ध

सप्तमी–प्रथमा

किस का क्रोध कब तक रहता है

उत्तमे तु क्षणं कोपो मध्यमे घटिकाद्वयम् ।
अधमे स्यादहोरात्रं चाण्डाले मरणान्तिकम् ।।[१]

उत्तमे तु क्षणं कोपः स्यात् उत्तम लोगों में क्षण भर कोप रहता है
मध्यमे घटिकाद्वयं कोपः स्यात् मध्यम लोगों में दो घड़ी कोप रहता है
अधमे अहोरात्रं कोपः स्यात् अधम लोगों में दिन-रात भर कोप रहता है
चाण्डाले मरणान्तिकं कोपः स्यात् तथा चाण्डाल में मरणपर्यन्त कोप रहता है ।

स्यात् (अस्– अदादिगणी परस्मैपदी लिङ् प्र० पु० ए०) क्षणं घटिकाद्वयं मरणान्तिकं (अव्यय–क्रियाविशेषण) तु (अव्यय) ।

सर्वत्र विभिन्नता

मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना कुण्डे कुण्डे नवं पयः ।
जातौ जातौ नवाचारा नवा वाणी मुखे मुखे ।।[२]

मुण्डे मुण्डे भिन्ना मतिः मुण्ड मुण्ड में मति भिन्न होती है
कुण्डे कुण्डे नवं पयः कुण्ड कुण्ड में नया पानी होता है
जातौ जातौ नवाचाराः जाति जाति में नवीन आचार होते हैं तथा
मुखे मुखे नवा वाणी । प्रत्येक मुख में नई वाणी होती है ।

पयः (पयस्–न० प्र० ए०) नवाचाराः (नवाः आचाराः)

१—२— समयोचितपद्यमालिका

सप्तमी—प्रथमा

तत्वज्ञान हो जाने पर संसार कैसा ?

वयसि गते कः कामविकारः क्षीणे वित्ते कः परिवारः।
शुष्के नीरे कः कासारः ज्ञाते तत्त्वे कः संसारः ॥[1]

वयसि गते कामविकारः कः ?	वय के बीत जाने पर कामविकार कैसा ?
वित्ते क्षीणे परिवारः कः ?	धन के क्षीण हो जाने पर परिवार कैसा ?
नीरे शुष्के कासारः कः ?	पानी के सूख जाने पर तालाब कैसा ?
तत्त्वे ज्ञाते संसारः कः ?	तत्व का ज्ञान हो जाने पर संसार कैसा ?

वयसि (वयस्-न० स० ए०) कः (किम्-प्र० पु० ए०)

कुदेश में जीविका नहीं चलती

कुपुत्रे नास्ति विश्वासः कुभार्यायां कुतो रतिः।
कुराज्ये निर्वृतिर्नास्ति कुदेशे नास्ति जीविका ॥२

कुपुत्रे विश्वासः नास्ति	कुपुत्र पर विश्वास नहीं होता
कुभार्यायां रतिः कुतः	दुष्ट स्त्री में प्रेम नहीं रहता ?
कुराज्ये निर्वृतिः नास्ति	कुराज्य में सुख-शान्ति नहीं मिलती (और)
कुदेशे जीविका नास्ति	कुदेश में जीविका नहीं चलती।

रतिः निर्वृतिः (रति, निर्वृति स्त्री० प्र० ए०) नास्ति (न—अस्ति)

१—सुभाषित संग्रह

सर्वनाम

सर्वात्मा को नमस्कार

यस्मिन् सर्वं यतः सर्वं यः सर्वं सर्वतश्च यः ।
यश्च सर्वमयो नित्यं तस्मै सर्वात्मने नमः ॥१

यस्मिन् सर्वम्—जिस में सब रहता है	यः सर्वमयः—जो सर्वमय है
यतः सर्वम्—जिस से सब होता है	तस्मै सर्वात्मने—उस सर्वात्मा को,
यः सर्वम्—जो सब कुछ है	परमेश्वर को
यः सर्वतः—जो सब ओर है	नित्यं नमः—नित्य नमस्कार है ।

यस्मिन् (यत्-पु० न० उ० ए०) तस्मै (तत्-पु० न० च० ए०) यतः (पञ्चम्यर्थक अव्यय (सर्वतः (सप्तम्यर्थक अव्यय) नित्यम् (अव्यय) नमः (अव्यय)

सबसे बड़ी बुद्धिमानी क्या है ?

इदमेव हि पाण्डित्यम् इयमेव विदग्धता ।
अयमेव परो धर्मो यदायान्नाधिको व्ययः ॥२

इदम् एव पाण्डित्यम्	यही पाण्डित्य है, बुद्धिमानी है
इयम् एव विदग्धता	यही विदग्धता है, चतुराई है (और)
अयम् एव परः धर्मः	यही सब से बड़ा धर्म है
यत् आयात् अधिकः व्ययः न	कि आय से अधिक व्यय न होने पावे ।

इदम् (इदम्-न० प्र० ए०) इयम् (इदम्-स्त्री० प्र० ए०) अयम् (इदम्-पु० प्र० ए०) हि एव न यत् (अव्यय)

१—शान्तिपर्व ४७, ३२६ २—सुभाषितसंग्रहः

सर्वनाम

धर्म किसे कहते हैं ?

तद् भोजनं यद् द्विज - भुक्त - शेषम्
तत् सौहृदं यत् क्रियते परस्मिन् ।
सा प्राज्ञता या न करोति पापम्
दम्भं विना यः क्रियते स धर्मः ॥[१]

तद् भोजनं यत् द्विजभुक्तशेषम्	वही भोजन है जो द्विजों के खाने से बचा हो
तत् सौहृदं यत् परस्मिन् क्रियते	वही सौहार्द है जो दूसरों के साथ किया जाता है
सा प्राज्ञता या पापं न करोति	वही बुद्धिमानी है जो पाप नहीं करती तथा
स धर्मः यः दम्भं विना क्रियते ।	वही धर्म है जो बिना दम्भ के किया जाय ।

तत् (तत्—न० प्र० ए०) यत् (न० प्र० ए०) सा (तत्—स्त्री० प्र० ए०) या (यत्—स्त्री० प्र० ए०) यः (यत्—पु० प्र० ए०) स (यद्—पु० प्र० ए०) ।

वह सत्य नहीं जिस में छल हो

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम् ।
धर्मः स नो यत्र न सत्यमस्ति सत्यं न तद् यत् छलनानुविद्धम् ॥[२]

सा सभा न, यत्र वृद्धाः न सन्ति	वह सभा नहीं, जहाँ वृद्ध न हों
ते वृद्धाः न, ये धर्मं न वदन्ति	वे वृद्ध नहीं, जो धर्म न बोलते हों
स धर्मः न, यत्र सत्यं न अस्ति	वह धर्म नहीं, जिसमें सत्य न हो तथा
तत् सत्यं न, यत् छलनानुविद्धम् ।	वह सत्य नहीं, जो छल से युक्त हो ।

ते (तत्—पु० प्र० ब०) ये (यत्—पु० प्र० ब०) ।

१—सुभाषितसंग्रह   २—विदुरनीति ३. ५८.

सर्वनाम

बार बार सोचने की बातें

कः कालः कानि मित्राणि को देशः कौ व्ययागमौ।
कश्चाहं का च मे शक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः ॥१

कः कालः, कानि मित्राणि	कैसा समय है, कौन मित्र हैं
कः देशः, कौ व्ययागमौ	कैसा देश है, क्या आय-व्यय है
कः च अहं का च मे शक्तिः	कौन मैं हूँ और मेरी शक्ति कितनी है
इति मुहुर्मुहुः चिन्त्यम्।	इन बातोंको बार-बार सोचते रहना चाहिये।

कः (किम् पु० प्र० ए०) कानि (किम्—न० प्र० ब०) कौ (किम्—पुं० प्र० द्वि०) का (किम्—स्त्री० प्र० ए०) च, इति, मुहुः मुहुः (अव्यय)।

मैत्री समानता में ही होती है

ययोरेव समं वित्तं ययोरेव समं कुलम्।
तयोर्मैत्री विवाहश्च न तु पुष्ट-विपुष्टयोः ॥२

ययोः एव समं वित्तम्	जिन दो व्यक्तियों का समान धन होता है
ययोः एव समं कुलम्	जिन दो व्यक्तियों का समान कुल होता है
तयोः मैत्री च विवाहः	उन्हीं में मैत्री तथा विवाह होता है
न तु पुष्ट-विपुष्टयोः।	न कि साधारण एवं विशिष्ट व्यक्तियों में।

ययोः (यत्—पुं० स्त्री० न० ष० द्वि०) तयोः (तत्—पुं० स्त्री० न० ष० द्वि०)।

१—चाणक्यनीति २—पञ्चतन्त्र १. २२५

सर्वनाम

किसे बराबर सुख मिलता है ?

कस्य दोषः कुले नास्ति व्याधिना को न पीडितः ।
व्यसनं केन न प्राप्तं कस्य सौख्यं निरन्तरम् ॥[१]

कस्य कुले दोषः नास्ति	किस के कुल में दोष नहीं होता
कः व्याधिना न पीडितः	कौन रोग से पीडित नहीं होता
केन व्यसनं न प्राप्तम्	कौन कष्ट में नहीं पड़ता और
कस्य निरन्तरम् सौख्यम् ।	किसे बराबर सुख मिलता है ?

कस्य (किम्–पु० न० ष० ए०) केन (किम्–पु० न० तृ० ए०)

वह देश है जहाँ जीवन चल सके

सा भार्या या प्रियं ब्रूते स पुत्रो यत्र निर्वृतिः ।
तन्मित्रं यत्र विश्वासः स देशो यत्र जीव्यते ॥[२]

सा भार्या या प्रियं ब्रूते	वह स्त्री है जो प्रिय बोले
स पुत्रः यत्र निर्वृतिः	वह पुत्र है जिससे शान्ति मिले
तत् मित्रं यत्र विश्वासः	वह मित्र है जिस पर विश्वास हो तथा
स देशः यत्र जीव्यते ।	वह देश है जहाँ जीवन चल सके ।

ब्रूते (ब्रू–अ० उ० लट् प्र० पु० ए०) जीव्यते (जीव–भ्वा० पर० कर्मवाच्य लट् प्र० पु० ए०)

१—समयोचितपद्यमालिका २—सुभाषितरत्नभाण्डागार

विशेष्य–विशेषण

धन का महत्त्व

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ।
स एव वक्ता स च दर्शनीयः सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥१

यस्य वित्तम् अस्ति	जिसके पास धन है	स वक्ता	वही वक्ता है
स नरः कुलीनः	वही मनुष्य कुलीन है	स दर्शनीयः	वही दर्शनीय है (क्यों कि)
स पण्डितः	वही पण्डित है	सर्वे गुणाः	सभी गुण
स श्रुतवान्	वही शास्त्रज्ञ है	काञ्चनम्	सोने अर्थात् धन-दौलतके ही
स गुणज्ञः	वही गुणज्ञ है	आश्रयन्ति	सहारे रहते हैं ।

विशेष्य—स नरः ।
विशेषण—शेष सभी प्रथमान्त पद ।

ऐसे लोग किसके वन्दनीय नहीं होते ?

वदनं प्रसाद-सदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः ।
करणं परोपकरणं येषां केषां न ते वन्द्याः ॥२

येषां वदनं प्रसाद-सदनम्	जिनका वदन प्रसन्नता का आगार हो
येषां हृदयं सदयम्	जिनका हृदय दया से परिपूर्ण हो
येषां वाचः सुधामुचः	जिनकी वाणी अमृत बरसाने वाली हो
येषां करणं परोपकरणम्	जिनका काम परोपकार करना हो
ते केषां न वन्द्याः ?	वैसे (सत्पुरुष) किन के वन्दनीय नहीं होते ?

विशेष्य—वदनम् हृदयम् वाचः ।
विशेषण—प्रसादसदनम् सदयम् सुधामुचः ।

१—सुभाषितसंग्रह २—नीतिशतकम् ४१

विशेष्य—विशेषण

कौन चीजें समूल नष्ट हो जाती है ?

पिपीलिकार्जितं धान्यं मक्षिका-संचितं मधु ।
लुब्धेन सञ्चितं द्रव्यं समूलं च विनश्यति ॥[१]

पिपीलिकार्जितं धान्यम्	चीटीं द्वारा इकट्ठा किया हुआ धान्य
मक्षिका-संचितं मधु	मधुमक्खी द्वारा इकट्ठा किया हुआ मधु (तथा)
लुब्धेन सञ्चितं द्रव्यम्	लोभी द्वारा इकट्ठा किया हुआ धन
समूलं विनश्यति ।	समूल विनष्ट हो जाता है ।

विशेष्य—धान्यम् मधु द्रव्यम् ।
विशेषण—पिपीलिकार्जितम् मक्षिकासञ्चितम् सञ्चितम् ।

किन लोगों का परित्याग कर देना चाहिये ?

राजा घृणी ब्राह्मणः सर्वभक्षी स्त्री चाऽवशा दुष्टबुद्धिः सहायः ।
प्रेष्यः प्रतीपोऽधिकृतः प्रमादी त्याज्या इमे यश्च कृतं न वेत्ति ॥[२]

घृणी राजा—निर्दय राजा	प्रतीपः प्रेष्यः—प्रतिकूल भृत्य
सर्वभक्षी ब्राह्मणः—सर्वभक्षी ब्राह्मण	प्रमादी अधिकृतः—प्रमादी अधिकारी
अवशा स्त्री—स्वच्छन्द स्त्री	यःकृतं नवेत्ति—और जो कृतघ्न हो
दुष्टबुद्धिः सहायः—दुष्ट सहायक	इमे त्याज्याः—ये त्याग के योग्य हैं ।

विशेष्य—राजा ब्राह्मणः स्त्री सहायः प्रेष्यः अधिकृतः ।
विशेषण—घृणी सर्वभक्षी अवशा दुष्टबुद्धिः प्रतीपः प्रमादी ।

१—२—सुभाषितरत्नभाण्डागार

विशेष्य–विशेषण

जो मन को अच्छा लगे वही अच्छा

दधि मधुरं मधु मधुरं द्राक्षा मधुरा सिताऽपि मधुरैव ।
तस्य तदेव हि मधुरं यस्य मनो यत्र संलगति ।।१

दधि मधुरं भवति	दही मीठा होता है
मधु मधुरं भवति	मधु मीठा होता है
द्राक्षा मधुरा भवति	दाख मीठा होता है और
सिता अपि मधुरा एव भवति	मिश्री भी मीठी होती है
(परन्तु) तस्य तत् एव मधुरम्	फिर भी उस के लिये वही मीठा है
यस्य मनः यत्र संलगति ।	जिसका मन जिसमें लगता है ।

विशेष्य—दधि मधु द्राक्षा सिता ।
विशेषण—मधुरम् मधुरम् मधुरा मधुरा ।

कौन लोग नीरोग रहते हैं ?

नरो हिताहार–विहारसेवी समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः ।
दाता समः सत्यपरः क्षमावान् आप्तोपसेवी च भवत्यरोगः ।।२

हिताहार विहारसेवी } हितकर आहार-विहार का सेवन करने वाला
समीक्ष्यकारी–सोचकर काम करने वाला
विषयेषु असक्तः—विषयों में असक्त
दाता—दान करने वाला
समः—सब पर समदृष्टि रखने वाला
सत्यपरः—सत्य बोलने वाला
क्षमावान्—सहनशील तथा
आप्तोपसेवी च–आप्त पुरुषों का सेवक
नरः अरोगः –मनुष्य नीरोग
भवति रहता है, होता है ।

विशेष्य—नरः ।
विशेषण—अन्य सभी प्रथमान्त पद ।

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार २—चरकसंहिता, शारी०

विशेष्य-विशेषण

कौन वस्तुएँ नई अच्छी होतीं हैं और कौन पुरानी ?

नवं वस्त्रं नवं छत्रं नव्या स्त्री नूतनं गृहम् ।
सर्वत्र नूतनं शस्तं सेवकान्ने पुरातने ॥[1]

नवं वस्त्रम्–नया कपड़ा
नवं छत्रम्–नया छाता
नव्या स्त्री–नई स्त्री
नूतनं गृहम्–नया मकान
सर्वत्र–इन सब बातों में
नूतनं शस्तम्–नया अच्छा होता है (पर)
सेवकान्ने–सेवक तथा अन्न
पुरातने शस्ते–पुराने ही अच्छे होते हैं।

विशेष्य—वस्त्रम् छत्रम् स्त्री गृहम् सेवकान्ने ।
विशेषण—नवम् नवम् नव्या नूतनम् पुरातने ।

वसन्त में सब कुछ मनोहर ही होता है

द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपद्मं स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः ।
सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते ॥[2]

द्रुमाः सपुष्पाः–पेड़ फूलों से लदे
सलिलं सपद्मम्–पानी कमल से भरा
स्त्रियः सकामाः–स्त्रियाँ कामोन्मत्त
पवनः सुगन्धिः–हवा सुगन्ध से युक्त
प्रदोषाः सुखाः–प्रदोष सुखद (और)
दिवसाः च रम्या–सभी दिन रमणीय (इस प्रकार)
प्रिये ! वसन्ते–प्रिये, वसन्त में
सर्वं चारुतरम् । सब कुछ मनोहर होता है।

विशेष्य—द्रुमाः सलिलम् स्त्रियः पवनः प्रदोषाः दिवसाः सर्वम्
विशेषण—सपुष्पाः सपद्मम् सकामाः सुगन्धिः सुखाः रम्याः चारुतरम्

1—सुभाषितसंग्रहः 2—ऋतुसंहार ६-१

तिङन्त प्रकरण

वर्तमान (लट्)

प्रेम के छ लक्षण

ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति ।
भुंक्ते भोजयते चैव षड्विधं प्रीतिलक्षणम् ।।१

ददाति, प्रतिगृह्णाति	देता है, ग्रहण करता है,
गुह्यम् आख्याति, पृच्छति	गोपनीय बातें कहता है, पूछता है,
भुंक्ते च भोजयते	खाता है और खिलाता है (यह)
षड्विधं प्रीतिलक्षणम् ।	छ प्रकार का प्रेम का लक्षण है ।

ददाति (दा–जु० उ०) प्रतिगृह्णाति (प्रति–ग्रह्–क्या० उ०) आख्याति (आ–ख्या–अ० प०) भुंक्ते (भुज–रु० आ०) भोजयते (भुज–रु० आ० णि०) ।

अधम और मूढ व्यक्ति का लक्षण

अनाहूतः प्रविशति अपृष्टो बहु भाषते ।
अविश्वस्ते विश्वसिति मूढचेता नराधमः ।।२

यः अनाहूतः प्रविशति	जो बिना बुलाये प्रवेश करता है
यः अपृष्टः बहु भाषते	जो बिना पूछे बहुत बोलता है
यः अविश्वस्ते विश्वसिति	जो अविश्वासी पर विश्वास करता है
स नराधमः मूढ़चेताः ।	वह आदमी अधम है और मूढ है ।

प्रविशति (प्र—विश–तु० प०) भाषते (भाष–भ्वा० आ०) विश्वसिति (वि–श्वस–अ० प०)

१—पञ्चतन्त्र ४-१०   २—विदुरनीति ३३-३६

वर्तमान (लट्)

विद्या का महत्त्व

विद्या ददाति विनयं विनयाद् यति पात्रताम् ।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति धनाद् धर्मस्ततः सुखम् ॥१

विद्या विनयं ददाति	विद्या विनय देती है
विनयात् पात्रतां याति	विनय से (मनुष्य) पात्रता को प्राप्त होता है
पात्रत्वाद् धनम् आप्नोति	पात्रता के कारण धन प्राप्त करता है तथा
धनाद् धर्मः, ततः सुखम्	धन से धर्म (और) तब सुख होता है ।

ददाति (दा–जु० उ०) याति (या–अ० प०) आप्नोति (आप–स्वा उ०)

ऐसे लोग विरल होते है

विरला जानन्ति गुणान्
विरलाः कुर्वन्ति निर्धने स्नेहम् ।
विरलाः पर-कार्य-रताः
पर-दुःखेनाऽपि दुःखिता विरलाः ॥२

जानन्ति (ज्ञा–क्र्या० उ०) कुर्वन्ति (कृ–त० उ०)

विरलाः गुणान् जानन्ति	विरले जन गुणों को पहचानते हैं
विरलाः निर्धने स्नेहं कुर्वन्ति	बिरले ही निर्धनों से स्नेह करते हैं
विरलाः पर–कार्य–रताः	विरले दूसरोंके काममें रत रहते हैं तथा
पर-दुःखेन दुःखिता अपि विरलाः	पर-दुःखसे दुखी भी विरले ही होते हैं ।

१—हितोपदेश २—सुभाषितरत्नभाण्डागार

वर्तमान (लट्)

आत्मा अजर-अमर है

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥[१]

एनं शस्त्राणि न छिन्दन्ति	इस (आत्मा) को शस्त्र नहीं काटते
एनं पावकः न दहति	इस (आत्मा) को आग नहीं जलाती
एनम् आपः न क्लेदयन्ति	इस (आत्मा) को पानी नहीं भिगाता और
मारुतः न शोषयति ।	(इसे) वायु नहीं सुखाता ।

छिन्दन्ति (छिद–रु० उ०) दहति (दह–भ्वा० प०) क्लेदयन्ति (क्लिद–दि० प० क्लिद्यति णि०) शोषयति (शुष–दि० प० शुष्यति णि०) ।

साधु-असाधु का भेद

अमृतं किरति हिमांशुः विषमेव फणी समुद्गिरति ।
गुणमेव वक्ति साधुः दोषमसाधुः प्रकाशयति ॥[२]

हिमांशुः अमृतं किरति	चन्द्रमा अमृत बिखेरता है
फणी विषम् एव समुद्गिरति	साँप जहर ही उगिलता है
साधुः गुणान् एव वक्ति	सज्जन गुण का ही वर्णन करता है(और)
असाधुः दोषम् प्रकाषयति ।	दुर्जन दोष को ही प्रकाशित करता है ।

किरति (कृ–तु० प०) समुद्गिरति (सम्–उत्–गृ–तु० प०) वक्ति (वच्–अ० प०) प्रकाशयति (प्र-काश–भ्वा० आ० काशते णि०) ।

१—भगवद्गीता २—सुभाषितरत्नभाण्डागार

वर्तमान (लट्)

आपसी फूट के दुष्परिणाम

न वै भिन्ना जातु चरन्ति धर्मं न वै सुखं प्राप्नुवन्तीह भिन्नाः ।
न वै भिन्ना गौरवं प्राप्नुवन्ति न वै भिन्नाः प्रशमं रोचयन्ति ॥[1]

भिन्नाः जातु धर्मं न चरन्ति	फूट वाले कभी धर्म नहीं करते
भिन्नाः सुखं न प्राप्नुवन्ति	फूट वाले सुख नहीं प्राप्त करते
भिन्नाः गौरवं न प्राप्नुवन्ति	फूट वाले गौरव नहीं पाते (तथा)
भिन्नाः प्रशमं न रोचयन्ति	फूट वाले शान्ति को नहीं पसन्द करते ।

चरन्ति (चर-भ्वा० पर०) प्राप्नुवन्ति (प्र-आप-स्वा० उ०) रोचयन्ति (रुच-भ्वा० आ० णि०) जातु (अव्यय) ।

संकट में ही संकट आते हैं

क्षते प्रहारा निपतन्त्यभीक्ष्णं धनक्षये वर्धते जाठराग्निः ।
आपत्सु वैराणि समुद्भवन्ति छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति ॥[2]

क्षते अभीक्ष्णं प्रहाराः निपतन्ति	घाव पर बार बार चोटें लगा करती हैं
धनक्षये जाठराग्निः वर्धते	धन क्षीण हो जाने पर पेट की आग बढ़ जाती है
आपत्सु वैराणि समुद्भवन्ति	आपत्ति में वैर उत्पन्न हो जाते हैं (क्योंकि)
छिद्रेषु अनर्थाः बहुलीभवन्ति ।	संकट के समय अनर्थ बढ़ जाया करते हैं ।

निपतन्ति (नि-पत-भ्वा० प०) वर्धते (वृध-भ्वा० आ०) समुद्भवन्ति (सम्-उत्-भू-भ्वा० प०) भवन्ति (भू-भ्वा० प०) अभीक्ष्णम् (अव्यय) ।

१—विदुरनीति ४, ५६, २—पञ्चतन्त्र ४, ६३

वर्तमान (लट्)

वे मनुष्य संसार में दुर्लभ होते हैं

उत्थापयन्ति पतितान् निमग्नान् तारयन्ति च ।
प्रबोधयन्ति शयितान् ते नरा भुवि दुर्लभाः ॥१

ये पतितान् उत्थापयन्ति	जो गिरे हुए लोगों को उठाते हैं
ये निमग्नान् तारयन्ति	जो डूबे हुए लोगों को तारते हैं
ये शयितान् प्रबोधयन्ति	जो सोये हुए लोगों को जगाते हैं
ते नरा भुवि दुर्लभाः ।	वे मनुष्य संसार में दुर्लभ होते हैं ।

उत्थापयन्ति (उत्-स्था-भ्वा० प० तिष्ठ आदेश उत्तिष्ठति णि०) तारयन्ति (तृ-भ्वा० पर० तरति णि०) प्रबोधयन्ति (प्र० बुध-दि० आ० बुद्ध्यते णि०) भुवि (भू-स्त्री० स० ए०) ।

सभी गुण धन का आश्रय लेते हैं

यथा विहङ्गास्तरुमाश्रयन्ति नद्यो यथा सागरमाश्रयन्ति ।
यथा तरुण्यः पतिमाश्रयन्ति सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥२

यथा विहङ्गाः तरुम् आश्रयन्ति	जैसे पक्षी बृक्ष का आश्रय लेते हैं
यथा नद्यः सागरम् आश्रयन्ति	जैसे नदियां सागर का आश्रय लेती हैं
यथा तरुण्यः पतिम् आश्रयन्ति	जैसे स्त्रियां पति का आश्रय लेती हैं
तथा सर्वे गुणाः काञ्चनम् आश्रयन्ति	वैसे सभी गुण धन का आश्रय लेते हैं ।

आश्रयन्ति (आ० श्री-भ्वा० उ०) नद्यः तरुण्यः (नदी, तरुणी स्त्री० प्र० ब०)

१—सम्पादक २—समयोचितपपद्यमालिका

वर्तमान (लट्)

महान पुरुषों का मान ही धन है

अधमा धनमिच्छन्ति धनमानौ च मध्यमाः ।
उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम् ॥[१]

अधमाः धनम् इच्छन्ति	अधम पुरुष (केवल) धन चाहते हैं
मध्यमाः धनमानौ इच्छन्ति	मध्यम पुरुष धन और मान चाहते हैं
उत्तमाः मानम् इच्छन्ति	उत्तम पुरुष (केवल) मान चाहते हैं
हि मानः महतां धनम् ।	क्योंकि मान ही महान लोगों का धन है ।

इच्छन्ति (इष-भ्वा० प० ष के स्थान पर छ आदेश) महताम् (महत्-तकारान्त, विशेषण, ष० ब०) हि (अव्यय) ।

सुख-दुःख बदलते रहते हैं

सुखस्यानन्तरं दुःखं दुःखस्यानन्तरं सुखम् ।
न नित्यं लभते दुःखं न नित्यं लभते सुखम् ॥[२]

सुखस्य अनन्तरं दुःखम्	सुख के बाद दुःख होता है (और)
दुःखस्य अनन्तरं सुखम्	दुःख के बाद सुख होता है ।
न नित्यं दुःखं लभते	न (मनुष्य) नित्य दुःख पाता है
न नित्यं सुखं लभते ।	(और) न नित्य सुख पाता है ।

लभते (लभ-भ्वा० आ०) ।

१—चाणक्यनीति ४'१८ २—समयोचितपदमालिका

वर्तमान (लट्)

दरिद्रता के दोष

पापे नियोजयति भोजयतेऽति दुःखं
स्तेयं च पाठयति शाठ्यमलं प्रशास्ति ।
दीनं च याचयति याचयतीह हीनं
किं नैव कारयति हन्त दरिद्रता नः ॥१

दरिद्रता पापे नियोजयति	दरिद्रता पाप करने में लगाती है
दरिद्रता दुःखं भोजयते	दरिद्रता दुःख भोगाती है
दरिद्रता स्तेयं पाठयति	दरिद्रता चोरी का पाठ पढाती है
दरिद्रता अलं शाठ्यम् प्रशास्ति	दरिद्रता खूब दुष्टता सिखाती है
दरिद्रता दीनं याचयति	दरिद्रता दीन से याचना कराती है और
दरिद्रता हीनं च याचयति	दरिद्रता हीन से याचना कराती है ।
हन्त, दरिद्रता नः	हाय, दरिद्रता हम लोगों से
किं नैव कारयति ?	क्या (दुष्कर्म) नहीं कराती है ?

नियोजयति (नि-युज्-चु० उ०) भोजयते (भुज—रु० उ०, णि०) पाठयति (पठ—भ्वा० प० णि०) प्रशास्ति (प्र०-शास-अ० प०) याचयति (याच--भ्वा० आ० णि०) कारयति (कृ—त० उ० णि०)

मदिरा पीने का परिणाम

हसति नृत्यति गायति वल्गति भ्रमति धावति मूर्छति शोचते ।
पतति रोदिति जल्पति गद्गदं धमति निन्दति मद्यमदातुरः ॥२

१—सुभाषितसंग्रह । २—सुभाषितरत्नसन्दोह ४९९

वर्तमान (लट्)

मद्यमदातुरः—मतवाला व्यक्ति	मूर्छति—मूर्छित होता है
हसति—हँसता है	शोचते—शोक करता है
नृत्यति—नाचता है	पतति—गिरता है
गायति—गाता है	रोदिति—रोता है
वल्गति—चलता है	गद्गदं जल्पति—बड़बड़ाता है
भ्रमति—घूमता है	धमति—फूँकता है तथा
धावति—दौड़ता है	निन्दति—निन्दा करता है ।

हसति (हस—भ्वा० प०) नृत्यति (नृत-दि० प०) गायति (गै-भ्वा० प०) वल्गति (वल्ग-भ्वा० प०) भ्रमति (भ्रम-भ्वा० प०) धावति (धाव-भ्वा० उ०) मूर्छति (मुर्छ-भ्वा० पर०) शोचते (शुच-भ्वादि आ०) पतति (पत-भ्वा० प०) रोदिति (रुद-अ० प०) जल्पति (जल्प-भ्वा० प०) धमति ध्मा०-भ्वा० प० धम आदेश) ।

ज्ञान का महत्त्व

तमो धुनीते कुरुते प्रकाशं शमं विधत्ते विनिहन्ति कोपम् ।
तनोति धर्मं विधुनोति पापं ज्ञानं न किं किं कुरुते नराणाम् ॥[१]

ज्ञानं तमः धुनीते	ज्ञान अन्धकार को दूर करता है
ज्ञानं प्रकाशं कुरुते	ज्ञान प्रकाश करता है
ज्ञानं शमं विधत्ते	ज्ञान शान्ति देता है
ज्ञानं कोपं विनिहन्ति	ज्ञान क्रोध को नष्ट करता है
ज्ञानं धर्मं तनोति	ज्ञान धर्म का विस्तार करता है तथा
ज्ञानं पापं विधुनोति	ज्ञान पाप को मिटाता है ।
ज्ञानं नराणां किं किं न कुरुते ?	ज्ञान मनुष्य का क्या क्या नहीं करता ?

धुनीते (धुञ्-क्र्या० उ०) कुरुते (कृ—त० उ०) विधत्ते (वि-धा-जु० उ०) विनिहन्ति (वि—नि-हन् अ० पर०) तनोति (तन—त० उ०) विधुनोति (वि-धु-स्वा० उ० , तमः (तमस्-न० द्वि० ए० तमः तमसी तमांसि) ।

१—सुभाषितरत्नसन्दोह १८६

वर्तमान (लट्)

अच्छे मित्र का लक्षण

पापान्निवारयति योजयते हिताय
गुह्यानि गूहति गुणान् प्रकटीकरोति ।
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले
सन्मित्र--लक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ।।१

पापात् निवारयति	बुरे कामों से बचाता है
हिताय योजयते	अच्छे कामों में लगाता है
गुह्यान् गूहति	गोपनीय बातों को छिपाता है
गुणान् प्रकटीकरोति	गुणों को प्रकट करता है
आपद्-गतं न जहाति	आपत्ति में छोड़ता नहीं है और
काले ददाति	समय पर सहायता देता है ।
इदं सन्तः	इसे सज्जन पुरुष
सन्मित्रलक्षणं प्रवदन्ति ।	अच्छे मित्र का लक्षण बतलाते हैं ।

निवारयति (नि–वृ–चु० उ०) योजयते (युज–चु० उ०) गूहति (गूह–भ्वा० उ०) प्रकटीकरोति (कृ–त० उ० करोति कुरुते) जहाति (हा–जु० प०) ददाति (दा–जु० उ० ददाति, दत्ते) प्रवदन्ति (प्र–वद–भ्वा० प०) सन्तः (सत्–प्र० ब० सन् सन्तौ सन्तः) ।

सत्सङ्गति का महत्त्व

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति ।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिम्
सत्सङ्गतिं कथय किं न करोति पुंसाम् ।।२

१—नीतिशतक ७१   २—नीतिशतक २३

वर्तमान (लट्)

धियः जाड्यं हरति	बुद्धि की जड़ता को दूर करती है
वाचि सत्यं सिञ्चति	वाणी में सचाई लाती है
मानोन्नतिं दिशति	सम्मान में वृद्धि करती है
पापम् अपाकरोति	पाप को नष्ट करती है
चेतः प्रसादयति	चित्त को निर्मल बनाती है तथा
दिक्षु कीर्तिं तनोति	दिशाओं में कीर्ति फैलाती है।
कथय, सत्सङ्गतिः	कहो, सत्पुरुषों की संगति
पुंसां किं न करोति ?	मनुष्यों का क्या (लाभ) नहीं करती ?

हरति (हृ–भ्वा० उ०) सिञ्चति (सिच–तु० प०) दिशति (दिश–तु० उ०) अपाकरोति (अप–आ–कृ० त० उ०) प्रसादयति (प्र– सद–भ्वा० प० सीद आदेश-सीदति णि० सादयति) तनोति (तन–त० उ०) कथय (कथ–चु० प० कथयति) धियः (धी–स्त्री० ष० ए०) वाचि (वाच्–स्त्री० स० ए०) चेतः (चेतस्–न० द्वि० ए० चेतः चेतसी चेतांसि)।

विद्या का महत्त्व

मातेव रक्षति पितेव हिते नियुंक्ते
कान्तेव चाभिरमयत्यपनीय खेदम्।
कीर्तिं तनोति वितनोति च दिक्षु लक्ष्मीं
किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या ॥[१]

१—भोजप्रबन्ध ५

वर्तमान (लट्)

माता इव रक्षति	माता के समान रक्षा करती है
पिता इव हिते नियुंक्ते	पिता के समान अच्छे काम में लगाती है
खेदम् अपनीय	थकावट को दूर कर
कान्ता इव अभिरमयति	स्त्री के समाव आराम देती है
लक्ष्मीं तनोति	लक्ष्मी को बढ़ाती है तथा
दिक्षु कीर्तिं वितनोति	दिशाओं में कीर्ति को फैलाती है।
विद्या कल्पलता इव	विद्या कल्पलता के समान
किं किं व साधयति ?	क्या क्या काम सिद्ध नहीं करती ?

रक्षति (रक्ष–भ्वा० प०) नियुंक्ते) नि–युज्–रु० उ० युनक्ति, युंक्ते) अपनीय (अप–नी– भ्वा० उ० ल्यप्–य) अभिरमयति (अभि–रम् भ्वा० आ० रमते णि० रमयति) तनोति वितनोति (तन–त० उ०) साधयति) साध–स्वा० प० साध्नोति णि०) इव (अव्यय)।

द्रव्योपार्जन का महत्व

माता निन्दति नाभिनन्दति पिता भ्राता न सम्भाषते
भृत्यः कुप्यति नानुगच्छति सुतः कान्ता च नाऽलिङ्गते।
अर्थ-प्रार्थना-शङ्कया न कुरुते सम्भाषणं वै सुहृत्
तस्माद् द्रव्यमुपार्जयस्व सुमते द्रव्येण सर्वे वशाः ॥१

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार

माता निन्दति	माता निन्दा करती है
पिता न अभिनन्दति	पिता प्रशंसा नहीं करता
भ्राता न सम्भाषते	भाई बातचीत नहीं करता
भृत्यः कुप्यति	नौकर नाराज रहता है
सुतः न अनुगच्छति	पुत्र आज्ञा का पालन नहीं करता
कान्ता च न आलिङ्गते	स्त्री आलिंगन नहीं करती तथा
अर्थ-प्रार्थना-शङ्कया	रुपया-पैसा मागने की शंका से
सुहृत् सम्भाषणं न कुरुते	मित्र वार्तालाप नहीं करता।
तस्मात् सुमते, द्रव्यम् उपार्जयस्व	इस लिये, हे भले आदमी, धन कमाओ
द्रव्येण सर्वे वशाः।	धन से ही सब लोग वश में हो सकते हैं।

निन्दति (निन्द–भ्वा॰ प॰) अभिनन्दति (अभि–नन्द–भ्वा॰ प॰) सम्भाषते (सम्–भाष–भ्वा॰ आ॰) कुप्यति (कुप–दि॰ प॰) अनुगच्छति (अनु–गम्–भ्वा॰ प॰) आलिङ्गते (आ–लिङ्ग भ्वा॰ उ॰) कुरुते (कृ–त॰ उ॰) उपार्जयस्व (उप–अर्ज–चु॰ उ॰ लोट् म॰ पुं॰ ए॰)

आज्ञा (लोट्)

धीर पुरुषों का लक्षण

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥[1]

१—नीतिशतक ८४

आज्ञा (लोट्)

नीति-निपुणाः निन्दन्तु	नीतिज्ञ लोग निन्दा करें
यदि वा स्तुवन्तु	अथवा प्रशंसा करें
लक्ष्मीः समाविशतु	लक्ष्मी आवे
यथेष्टं वा गच्छतु	अथवा यथेच्छ चली जाय
अद्यैव मरणम् अस्तु	आज ही मृत्यु हो जाय
युगान्तरे वा	अथवा युगान्तर में हो, पर
धीराः न्याय्यात् पथः	धीर पुरुष न्यायमार्ग से
पदं न प्रविचलन्ति।	एक पग भी विचलित नहीं होते।

आज्ञा (लोट्)

चार उत्तम उपदेश

त्यज दुर्जनसंसर्गं भज साधु-समागमम्।
कुरु पुण्यमहोरात्रं स्मर नित्यमनित्यताम्॥[1]

दुर्जन—संसर्गं त्यज	दुर्जनों का संसर्ग छोड़ो
साधु—समागमं भज	सज्जनों का समागम करो
अहोरात्र पुण्यं कुरु	दिन-रात पुण्य करो (और)
नित्यम् अनित्यतां स्मर।	नित्य (संसार की) अनित्यता का स्मरण रखो।

त्यज (त्यज—भ्वा० प०) भज (भज—भ्वा० उ०) कुरु (कृ—त० उ०) स्मर (स्मृ—भ्वा० प०) अहोरात्रम् नित्यम् (अव्यय)।

१—चाणक्यनीति २ १३

आज्ञा (लोट्)

क्या पूछना चाहिये क्या नहीं ?

गुणं पृच्छस्व मा रूपं शीलं पृच्छस्व मा कुलम् ।
सिद्धिं पृच्छस्व मा विद्यां भोगं पृच्छस्व मा धनम् ॥[1]

गुणं पृच्छस्व, रूपं मा	गुण पूछो, रूप नहीं
शीलं पृच्छस्व, कुलं मा	शील पूछो, कुल नहीं
सिद्धिं पृच्छस्व, विद्यां मा	सिद्धि पूछो, विद्या नहीं
भोगं पृच्छस्व, धनं मा ।	भोग पूछो, धन नहीं ।

पृच्छस्व (प्रच्छ–तु० प०) मा अव्यय) ।

चार महत्त्वपूर्ण शिक्षायें

धर्मं चरत माऽधर्मं सत्यं वदत माऽनृतम् ।
दीर्घं पश्यत मा ह्रस्वं परं पश्यत माऽपरम् ॥[2]

धर्मं चरत अधर्मं मा	धर्म का आचरण करो, अधर्म का नहीं
सत्यं वदत अनृतं मा	सत्य बोलो, असत्य नहीं
दीर्घं पश्यत ह्रस्वं मा	दूर तक देखो, समीप में नहीं
परं पश्यत अपरं मा ।	परम तत्त्व को देखो, छोटी चीजों को नहीं ।

ईश्वर से प्रार्थना

अविनयमपनय विष्णो दमय मनः शमय विषय-मृगतृष्णाम् ।
भूतदयां विस्तारय तारय संसार-सागरतः ॥[3]

विष्णो ! अविनयम् अपनय	हे भगवन् (मेरे) अविनय को दूर कीजिये
मनः दमय	(मेरे) मन का दमन कीजिये
विषय-मृगतृष्णां शमय	(मेरी) विषय-मृगतृष्णा को शान्त कीजिये
भूतदयां विस्तारय	(मुझमें) प्राणियों पर दया का विस्तार कीजिए
संसार-सागरतः तारय	(और मुझे) संसार-सागर से पार कीजिये ।

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार
२—षट्पदीस्तोत्र
३—

आज्ञा (लोट्)

सज्जनों के लक्षण

तृष्णां छिन्धि भज क्षमां जहि मदं पापे रतिं मा कृथाः
सत्यं ब्रूह्यनुयाहि साधु-पदवीं सेवस्व विद्वज्जनान् ।
मान्यान् मानय विद्विषोऽप्यनुनय ह्याच्छादय स्वान् गुणान्
कीर्तिं पालय दुःखिते कुरु दयामेतत् सतां लक्षणम् ॥१

तृष्णां छिन्धि—तृष्णा को काटो
क्षमां भज—सहनशीलता रखो
मदं जहि—अभिमान छोड़ो
पापे रतिं मा कृथाः—पाप से प्रेम मत करो
सत्यं ब्रूहि—सत्य बोलो
साधुपदवीम् अनुयाहि—सज्जनों के मार्ग पर चलो
विद्वज्जनान् सेवस्व—विद्वान् पुरुषों की सेवा-शुश्रूषा करो

मान्यान् मानय—माननीयों का आदर करो
विद्विषः अपि अनुनय—शत्रुओं को भी समझाओ-बुझाओ
स्वान् गुणान् आच्छादय—अपने गुणों को छिपाओ
कीर्तिं पालय—यश की रक्षा करो तथा
दुःखिते दयां कुरु—दुखी व्यक्ति पर दया करो (क्योंकि)
सताम् एतत् लक्षणम्—सज्जनों के यही सब लक्षण हैं, पहचान हैं ।

छिन्धि (छिद-रु० उ०) जहि (हा० जु० प०) मा कृथाः (कृ-लुङ्-म०-ए० मा के योग में अट् का अभाव) ब्रूहि (ब्रू-अ० उ०) अनुयाहि (अनु-या-अ० प०) सेवस्व (सेव-भ्वा० आ०) मानय (मान-चु० उ०) अनुनय (अनु-नी-भ्वा० उ०) आच्छादय (आ-छद-चु० उ०) पालय (पाल-चु० उ०) कुरु (कृ० त० उ०) ।

१—नीतिशतक ७८

विधि–लिङ्

पुत्र के साथ कब कैसा व्यवहार करना चाहिये ?

लालयेत् पञ्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताड़येत् ।
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे पुत्रं मित्रमिवाचरेत् ॥[१]

पञ्च वर्षाणि लालयेत्	पांच वर्ष तक पुत्र का लालन करना चाहिए
दश वर्षाणि ताडयेत्	दश वर्ष तक पुत्र का ताड़न करना चाहिये
षोडशे वर्षे तु प्राप्ते	परन्तु सोलहवें वर्ष के आ जाने पर
पुत्रं मित्रम् इव आचरेत् ।	पुत्र के साथ मित्र के समान आचरण करना चाहिये ।

चार उत्तम शिक्षायें

एकः स्वादु न भुञ्जीत एकश्चार्थान् न चिन्तयेत् ।
एको न गच्छेदध्वानं नैकः सुप्तेषु जागृयात् ॥[२]

एकः स्वादु न भुञ्जीत	अकेले स्वादिष्ट वस्तु नहीं खानी चाहिये
एकः अर्थान् न चिन्तयेत्	अकेले गम्भीर विषयों पर विचार नहीं करना चाहिये
एकः अध्वानं न गच्छेत्	अकेले (दुर्गम) मार्ग पर नहीं चलना चाहिये तथा
एकः सुप्तेषु न जागृयात् ।	सब के सो जाने पर अकेले नहीं जागना चाहिये ।

१—चाणक्यनीति ३ १८ २—विदुरनीति ३२-४१

विधि (लिङ्)

चार उत्तम शिक्षायें

दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत् ।
सत्यपूतां वदेद् वाचं मनःपूतं समाचरेत् ॥[१]

दृष्टिपूतं पादं न्यसेत्	आंख से देखकर पैर रखना चाहिये
वस्त्रपूतं जलं पिबेत्	वस्त्र से छान कर जल पीना चाहिये
सत्यपूतां वाचं वदेत्	सत्य से पवित्र वाणी बोलना चाहिये (और)
मनःपूतं समाचरेत् ।	जो मन को उचित लगे, वह करना चाहिये ।

कब क्या पीना चाहिये ?

दिनान्ते च पिबेद् दुग्धं निशान्ते च पिबेत्पयः ।
भोजनान्ते पिबेत्तक्रं किं वैद्यस्य प्रयोजनम् ॥[२]

दिनान्ते दुग्धं पिबेत्	दिन के अन्त में दूध पीना चाहिये
निशान्ते पयः पिबेत्	रात के अन्त में पानी पीना चाहिये और
भोजनान्ते तक्रं पिबेत्	भोजन के अन्त में तक्र पीना चाहिये
वैद्यस्य किं प्रयोजनम् ।	फिर वैद्यों से क्या मतलब ?

१—मनुस्मृति ४·४६. —२—सुभाषितसंग्रहः

विधि (लिङ्)

कौन काम कैसा करना चाहिये ?

शुकवद् भाषणं कुर्याद् बकवद् ध्यानमाचरेत् ।
अजवच्चर्वणं कुर्याद् गजवत् स्नानमाचरेत् ॥१

शुकवत् भाषणं कुर्यात्	सुग्गे के समान बोलना चाहिये
बकवत् ध्यानम् आचरेत्	बगुला के समान ध्यान करना चाहिये
अजवत् चर्वणं कुर्यात्	बकरे के तरह चबाना चाहिये और
गजवत् स्नानम् आचरेत् ।	हाथी के तरह स्नान करना चाहिये ।

चार चेतावनी

न तत्तरेद्यस्य न पारमुत्तरेत् न तद्धरेद्यत् पुनराहरेत् परः ।
न तत् खनेद्यस्य न मूलमुद्धरेत् न तं हन्याद्यस्य शिरो न पालयेत् ॥२

तत् न तरेत् यस्य पारं न उत्तरेत्	उसे नहीं तैरना चाहिये जिसके पार न उतर सके
तत् न हरेत् यत् अन्यः पुनः आहरेत्	उस वस्तु को नहीं लेना चाहिये जिसे पुनः कोई दूसरा ले लें
तत् न खनेत् यस्य मूलं न उद्धरेत्	उसे नहीं खानना चाहिये जिसे मूल से न उखाड़ सके
तं न हन्यात् यस्य शिरः न पालयेत्	उसे नहीं मारना चाहिये जिसके शिर को सामने न रख सके ।

१— समयोचितपद्यमालिका
२—शान्तिपर्व ४० ६५

कर्मवाच्य

किससे क्या होता है ?

अभ्यासाद्धार्यते विद्या कुलं शीलेन धार्यते ।
गुणेन ज्ञायते आर्यः कोपो नेत्रेण गम्यते ॥[१]

अभ्यासात् विद्या धार्यते	अभ्यास से विद्या सुरक्षित रहती है
शीलेन कुलं धार्यते	शील से कुल सुरक्षित रहता है
गुणेन आर्यः ज्ञायते	गुण से आर्य (श्रेष्ठ) समझा जाता है
नेत्रेण कोपः गम्यते	नेत्र से क्रोध जाना जाता है ।

धार्यते (धृ–भ्वा० उ० णि० लट् प्र० पु० ए०) ज्ञायते (ज्ञा–क्या० उ० लट् प्र० पु० ए०) गम्यते (गम–भ्वा० प० लट् प्र० पु० ए०) ।

सिंह और शृगाल का भेद

गम्यते यदि मृगेन्द्र-मन्दिरे लभ्यते करि-कपोल-मौक्तिकम् ।
जम्बुकालय-गतेन लभ्यते वत्स-पुच्छ-खुर–चर्म–खण्डनम् ॥[२]

यदि मृगेन्द्र-मन्दिरे गम्यते	यदि सिंह के घर जाया जाता है (तो)
करि-कपोल-मौक्तिकं लभ्यते	हाथी के कपोल का मोती पाया जाता है
जम्बुकालय—गतेन लभ्यते	(पर) शृगाल के घर जाने पर पाया जाता है
वत्स-पुच्छ-खुर–चर्म–खण्डनम्	बछड़े के पूंछ खुर और चाम का टुकड़ा ।

लभ्यते (लभ—भ्वा० आ०) ।

१—सुभाषितसंग्रह

२—चाणक्यनीति ७।१७

कर्मवाच्य

लोगों को कैसा शास्त्र पढ़ाना चाहिये ?

विवेको जन्यते येन संयमो येन पाल्यते ।
धर्मः प्रकाश्यते येन मोहो येन निहन्यते ॥
मनो नियम्यते येन रागो येन निकृत्यते ।
तद्देयं भव्यजीवानां शास्त्रं निर्धूत-कल्मषम् ॥[1]

येन विवेकः जन्यते	जिससे विवेक पैदा होता है
येन संयमः पाल्यते	जिससे संयम का पालन होता है
येन धर्मः प्रकाश्यते	जिससे धर्म प्रकाशित होता है
येन मोहः निहन्यते	जिससे मोह दूर किया जाता है
येन मनः नियम्यते	जिससे मन वश में रखा जाता है
येन रागः निकृत्यते	जिससे आसक्ति मिटाई जाती है
तत् निर्धूत-कल्मषं शास्त्रं	वह कल्मषरहित पवित्र शास्त्र
भव्यजीवानां देयम् ।	उत्तम जीवों को देना चाहिये ।

जन्यते (जन-दि० आ० जायते) पाल्यते (पाल-चु० उ० पालयति-ते) प्रकाश्यते (प्र-काश-भ्वा० आ० प्रकाशते) निहन्यते (नि-हन-अ० प० निहन्ति) नियम्यते (नि-यम-भ्वा० प० नियच्छति) निकृत्यते (नि-कृत-तु० प० निकृन्तति) देयम् (दा-जु० उ० यत्-प्र० न० ए०) ।

१—अमितगतिश्रावकाचार ६, १०३-१०४

कर्मवाच्य

शूर-वीर का ही सर्वत्र आदर होता है

सर्वत्र लाल्यते शूरो भीरुः सर्वत्र हन्यते ।
पच्यन्ते केवला मेषाः पूज्यन्ते युद्ध-दुर्मदाः ॥१

शूरः सर्वत्र लाल्यते	शूर-वीर सर्वत्र आदर पाता है और
भीरुः सर्वत्र हन्यते	भीरु मनुष्य सर्वत्र मारा जाता है ।
केवलाः मेषाः पच्यन्ते	सीधे-सादे भेड़ पकाये जाते हैं (पर)
युद्ध-दुर्मदाः पूज्यन्ते ।	लड़ाई में डटने वाले भेड़ पूजे जाते हैं ।

लाल्यते (लल-चु० उ० लालयति-ते) हन्यते (हन-अ० प० हन्ति) पच्यन्ते (पच भ्वा० उ० पचति-ते) पूज्यन्ते (पूज-चु० उ० पूजयति-ते) रक्ष्यते (रक्ष भ्वा० प० रक्षति) ।

किससे किसकी रक्षा होती है ?

सत्येन रक्ष्यते धर्मो विद्या योगेन रक्ष्यते ।
मृजया रक्ष्यते रूपं कुलं वृत्तेन रक्ष्यते ॥२

धर्मः सत्येन रक्ष्यते	धर्म की रक्षा सत्य से होती है
विद्या योगेन रक्ष्यते	विद्या की रक्षा अभ्यास से होती है
रूपं मृजया रक्ष्यते	रूप की रक्षा धोने-माँजने से होती है तथा
कुलं वृत्तेन रक्ष्यते ।	कुल की रक्षा सदाचार से होती है ।

मृजया (मृजा-स्त्री० तृ० ए०) ।

१—सभारञ्जनशतकम् ४८ २—विदुरनीति ३४·३९

कृदन्त प्रकरणं

तव्यत् (तव्य)

सहकारिता का महत्व

पञ्चभिः सह गन्तव्यं स्थातव्यं पञ्चभिः सह ।
पञ्चभिः सह वक्तव्यं न दुःखं पञ्चभिः सह ॥१

पञ्चभिः सह गन्तव्यम्	पाँच लोगों के साथ चलना चाहिये
पञ्चभिः सह स्थातव्यम्	पाँच लोगों के साथ रहना चाहिये
पञ्चभिः सह वक्तव्यम्	पाँच लोगों के साथ बोलना चाहिए (क्योंकि)
पञ्चभिः सह दुःखं न ।	पाँच लोगों के साथ रहने से दुःख नहीं होता ।

गन्तव्य (गम्-तव्य) स्थातव्य (स्था-तव्य) वक्तव्य (वच्-तव्य) ।

धन का दान और भोग करना चाहिये

दातव्यं भोक्तव्यं सति विभवे सञ्चयो न कर्तव्यः ।
पश्यन्तु मधुकरीणां सञ्चितमर्थं हरन्त्यन्ये ॥२

सति विभवे दातव्यं भोक्तव्यम्	धन होने पर दान देना चाहिये और भोग करना चाहिए ।
सञ्चयः न कर्तव्यः	सञ्चय नहीं करना चाहिये ।
पश्यन्तु, मधुकरीणां सञ्चितम्	देखिये, मधुमक्खियों के सञ्चित
अर्थम् अन्ये हरन्ति ।	धन को दूसरे लोग हर लेते हैं ।

दातव्य (दा) भोक्तव्य (भुज) कर्तव्य (कृ) पश्यन्तु (दृश-दि० प० लोट् प्र० ब०) हरन्ति (हृ–भ्वा० उ०)

१—२—सुभाषितरत्नभाण्डागार

अनीयर् (अनीय)

चार उत्तम शिक्षायें

कस्यचित् किमपि नो हरणीयं मर्मवाक्यमपि नोच्चरणीयम् ।
श्रीपतेः पदयुगं स्मरणीयं लीलया भवजलं तरणीयम् ॥[1]

कस्यचित् किमपि न हरणीयम्	किसी का कुछ भी हरण नहीं करना चाहिये
मर्मवाक्यम् अपि न उच्चरणीयम्	कठोर वाक्य भी नहीं बोलना चाहिये
श्रीपतेः पदयुगं स्मरणीयम्	श्रीपति के चरणयुगल का स्मरण करना चाहिये
लीलया भवजलं तरणीयम्	(और) सुगमता से भवसागर को पार करना चाहिये।

हरणीय (हृ–हर्) उच्चरणीय (उत्–चर) स्मरणीय (स्मृ–स्मर्) तरणीय (तृ–तर्)

ण्यत् (य) णिनी (इत्)

विद्यारूपी धन की श्रेष्ठता

न चोरहार्यं न च राजहार्यं न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि ।
व्यये कृते वर्द्धत एव नित्यं विद्याधनं सर्वधन–प्रधानम् ॥[2]

न चोरहार्यं, न च राजहार्यम्	न चोरों द्वारा चुराने लायक होता है और न राजाओं द्वारा छीनने लायक होता है
न भ्रातृभाज्यं, न च भारकारि	न भाइयों द्वारा बाँटने लायक होता है और न भार (बोझा) जैसा होता है
व्यये कृते नित्यं वर्द्धते एव	खर्च करने पर बराबर बढ़ता ही रहता है (अतः)
विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्	विद्यारूपी धन सब धनों में प्रधान होता है ।

हार्य (हृ–हार्) भाज्य (भज) भारकारि (भार–कृ–णिनि)।

1—सुभाषितरत्नभाण्डागार 2—नीतिशतकम्

यत् (य)

चार उत्तम कर्तव्य

गेयं गीता नामसहस्रं ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्रम् ।
नेयं सज्जनसङ्गे चित्तं देयं दीनजनाय च वित्तम् ॥[1]

गीता-नामसहस्रं गेयम्	गीता और सहस्रनाम का गान करना चाहिये
अजस्रं श्रीपतिरूपं ध्येयम्	सदा भगवान के रूप का ध्यान करना चाहिये
सज्जनसङ्गे चित्तं नेयम्	सज्जनों के सङ्ग में चित्त लगाना चाहिये
च दीनजनाय वित्तं देयम् ।	और दीन जनों को धन देना चाहिये ।

गेयं (गै) ध्येयं (ध्यै) नेयं (नी) देयं (दा)।

हरि की प्राप्ति का उपाय

हरिः सेव्यो हरिर्ज्ञेयो हरिर्ध्येयो निरन्तरम् ।
हरिः श्राव्यो हरिर्गेयो हरिमेवाप्नुयात् तदा ॥[2]

निरन्तरं हरिः सेव्यः	सदा हरि की सेवा करनी चाहिये
निरन्तरं हरिः ज्ञेयः	सदा हरि का ज्ञान करना चाहिये
निरन्तरं हरिः ध्येयः	सदा हरि का ध्यान करना चाहिये
निरन्तर हरिः श्राव्यः	सदा हरि का श्रवण करना चाहिये
निरन्तरं हरिः गेयः	सदा हरि का गान करना चाहिये
तदा हरिम् एव आप्नुयात्	तब हरि को अवश्य पा जायगा ।

सेव्य (सेव) ज्ञेय (ज्ञा) श्राव्य (श्रु) आप्नुयात (आप्-स्वा० उ० लिङ् प्र० ए०) ।

१—भजगोविन्दम् स्तोत्र   २—सिद्धान्तसंक्षेपनिरूपणम्

तव्यत्, यत्

भाग्योदय के साधन

गन्तव्यं नगरशतं विज्ञानशतानि शिक्षितव्यानि ।
नरपति–शतं च सेव्यं स्थानान्तरितानि भाग्यानि ॥[१]

नगरशतं गन्तव्यम्	सैकड़ों नगरों में जाना चाहिये
विज्ञानशतानि शिक्षितव्यानि	सैकड़ों कलायें सीखनी चाहियें
नरपति—शतं च सेव्यम्	सैकड़ों नरपतियों की सेवा करनी चाहिये
भाग्यानि स्थानान्तरितानि ।	(क्योंकि) भाग्य एक स्थान पर नहीं रहता ।

तव्यत्, अनीयर्, यत्

जैसे के साथ वैसा व्यवहार

यस्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्यः तस्मिन् तथा वर्तितव्यं स धर्मः ।
मायाचारो मायया वारणीयः साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः ॥[२]

यः मनुष्यः यस्मिन् यथा वर्तते	जो मनुष्य जिसके साथ जैसा व्यवहार करता है
तस्मिन् तथा वर्तितव्यं, स धर्मः	उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिये, यही धर्म है ।
मायाचारः मायया वारणीयः	कपट व्यवहार को कपट से ही रोकना चाहिये
साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेयः ।	और सद् व्यवहार का सद् व्यवहार से स्वागत करना चाहिये ।

वर्तितव्य (वृत–तव्य) वारणीय (वृ–अनीय) प्रत्युपेय (प्रति–उप–इ–यत्) ।

१—कथारत्नाकर २—महाभारत उद्योगपर्व

क्त (त)

जीवन की चार विडम्बनायें

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः ।
कालो न यातो वयमेव याताः तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः ॥१

भोगाः न भुक्ताः–भोग नहीं भोगे गये	कालः न यातः–काल नहीं बीता
वयम् एव भुक्ताः–हम लोग ही भोगे गये	वयम् एव याताः–हम लोग ही बीत गये
तपः न तप्तम्–तप नहीं तपा गया	तृष्णा न जीर्णा–तृष्णा जीर्ण नहीं हुई
वयम् एव तप्ताः–हम लोग ही तप्त हुए	वयम् एव जीर्णाः-हम लोग ही जीर्ण हो गये ।

भुक्त (भुज) तप्त (तप) यात (या) जीर्ण (जॄ) ।

शोचनीय जीवन

अधीता न कला काचित् न च किञ्चित् कृतं तपः ।
दत्तं न किञ्चित् पात्रेभ्यो गतं च मधुरं वयः ॥२

काचित् कला न अधीता	कोई कला नहीं सीखी
किञ्चित् तपः न कृतम्	कुछ तप नहीं किया
पात्रेभ्यः किञ्चित् दत्तं न	अच्छे लोगों को कुछ दिया भी नहीं
मधुरं च वयः गतम् ।	और सारी मनोहर उम्र बीत गई ।

अधीत (अधि–इ) कृत (कृ) दत्त (दा) गत (गम्) ।

१—नीतिशतक १५५ २—प्रबन्धकोश २४–४९

क्त (त)

किस से क्या जीता जाता है ?

जिता सभा वस्त्रवता मिष्टाशा गोमता जिता।
अध्वा जितो यानवता सर्वं शीलवता जितम् ॥१

वस्त्रवता सभा जिता	सुन्दर वस्त्र वाला सभा को जीत लेता है
गोमता मिष्टाशा जिता	गाय वाला मधुर वस्तु खाने की इच्छा जीत लेता है
यानवता अध्वा जितः	सवारी वाला मार्ग को जीत लेता है (पर)
शीलवता सर्वं जितम्।	शीलवान मनुष्य सबको जीत लेता है।

क्त (त)

उसने किस को नहीं जीता ?

धने येन जितो गर्वो यौवने मन्मथो जितः।
तेन मानुषसिंहेन जितं किं न महीतले ॥२

येन धने गर्वः जितः	जिसने धन होने पर गर्व को जीत लिया
येन यौवने मन्मथः जितः	जिसने जवानी में काम को जीत लिया
तेन मानुष–सिंहेन	उस महान् पुरुष ने
महीतले किं न जितम्।	संसार में क्या नहीं जित लिया ?

जित (जि० भ्वा० प० क्त)।

१—नीतिसंग्रह

२—पुरुषपरीक्षा ३०-५

तुमुन् (तुम्)

सज्जनों का स्वभाव

उपकर्तुं प्रियं वक्तुं कर्तुं स्नेहमकृत्रिमम् ।
सज्जनानां स्वभावोऽयं केनेन्दुः शिशिरीकृतः ॥१

उपकर्तुं, प्रियं वक्तुम्	उपकार करना, प्रिय बोलना
अकृत्रिमं स्नेहं कर्तुम्	अकृत्रिम स्नेह करना
अयं सज्जनानां स्वभावः	यह सज्जनों का स्वभाव है
केन इन्दुः शिशिरीकृतः ?	चन्द्रमा को किसने ठंढा बनाया है ?

उपकर्तुं (उप-कृ) वक्तुम् (वच) कर्तुम् (कृ) ।

नीच का स्वभाव

नाशयितुमेव नीचः परकार्यं वेत्ति न प्रसाधयितुम् ।
पातयितुमेव शक्तिर् वायोर्वृक्षं न चोन्नेतुम् ॥२

नीचः परकार्यं नाशयितुम् एव वेत्ति	नीच परकार्य को बिगाड़ना ही जानता है
प्रसाधयितुं न वेत्ति	बनाना नहीं जानता
वृक्षं पातयितुमेव वायोः शक्तिः	वृक्ष को गिराने को ही वायु में शक्ति है
" न तु उन्नेतुं शक्तिः	वृक्षको उठाने की नहीं ।

नाशयितुम् (नश–णि०) प्रसाधयितुम् (प्र–साध-णि०) पातयितुं (पत–णि०) उन्नेतुम् (उत्–नम) ।

१—सुभाषितरत्नभाण्डागार २—पञ्चतन्त्र १. ४०७

क्त्वा (त्वा)

जितेन्द्रिय किसे समझना चाहिये ?

श्रुत्वा स्पृष्ट्वा च दृष्ट्वा च भुक्त्वा घ्रात्वा च यो नरः ।
न हृष्यति ग्लायति वा स विज्ञेयो जितेन्द्रियः ॥[1]

यः नरः–जो पुरुष	घ्रात्वा–सूंघ कर
श्रुत्वा–सुनकर	न हृष्यति–न प्रसन्न होता है (और)
स्पृष्ट्वा–छूकर	न ग्लायति–न दुखी होता है
दृष्ट्वा–देखकर	स जितेन्द्रियः–उसे जितेन्द्रिय
भुक्त्वा–भोजन कर	विज्ञेयः–समझना चाहिये ।

श्रुत्वा (श्रु) स्पृष्ट्वा (स्पृश) दृष्ट्वा (दृश) भुक्त्वा (भुज) घ्रात्वा (घ्रा) हृष्यति (हृष–दि० प०) ग्लायति (ग्लै–भ्वा० प०) विज्ञेयः (वि–ज्ञा–यत्) ।

सुखी रहने के उपाय

मानं हित्वा प्रियो नित्यं कामं हित्वा सुखी भवेत् ।
क्रोधं हित्वा निराबाधः तृष्णां जित्वा न तप्यते ॥[2]

मानं हित्वा नित्यं प्रियः भवेत्	अभिमान छोडकर सदा प्रिय होता है
कामं हित्वा सुखी भवेत्	कामनाओं को छोड़कर सुखी होता है
क्रोधं हित्वा निराबाधः भवेत्	क्रोध को छोडकर निर्बाध होता है, (और)
तृष्णां जित्वा न तप्यते ।	तृष्णा को जीतकर दुखी नहीं होता ।

हित्वा (हा–जु०) जित्वा (जि–भ्वा०) ।

१—मनुस्मृति २. ९८   २—सुभाषितसंग्रह

ल्यप् (य)

कुछ असंभव बातें

कुदेशमासाद्य कुतोऽर्थसञ्चयः कुपुत्रमासाद्य कुतो जलाञ्जलिः।
कुगेहिनीं प्राप्य गृहे कुतः सुखं कुशिष्यमध्यापयतः कुतो यशः ॥[1]

कुदेशम् आसाद्य अर्थसञ्चयः कुतः	कुदेश में पहुँचकर अर्थ की प्राप्ति कहाँ ?
कुपुत्रम् आसाद्य जलाञ्जलिः कुतः	कुपुत्र को पाकर जलाञ्जलि की क्या आशा ?
कुगेहिनीं प्राप्य गृहे सुखं कुतः	दुष्ट स्त्री को पाकर घर में सुख कहाँ (तथा)
कुशिष्यम् अध्यापयतः यशः कुतः	दुष्ट शिष्य को पढाने वाले को यश कहाँ ?

आसाद्य (आ–सद) प्राप्य (प्र–आप) अध्यापयतः (अधि–इ–अ० आ० णि० शतृ)।

क्त्वा, ल्यप्

न्यायार्जित थोड़ा लाभ भी बहुत होता है

अकृत्वा परसन्तापम् अगत्वा खलमन्दिरम्।
अनुल्लंघ्य सतां मार्गं यत् स्वल्पमपि तद् बहु ॥[2]

परसन्तापम् अकृत्वा	दूसरों को कष्ट न देकर
खलमन्दिरम् अगत्वा	दुर्जनों के सम्पर्क में न जाकर (तथा)
सतां मार्गम् अनुल्लंघ्य	सज्जनों के मार्ग का उल्लंघन न कर
यत् स्वल्पम्, तद् अपि बहु	यदि थोड़ा भी लाभ हो तो वह बहुत होता है।

अकृत्वा (न कृ) अगत्वा (न गम्) अनुल्लङ्घ्य (न–उत्–लङ्घ्)।

१—चाणक्यनीति ६५ २—सुभाषितरत्नभाण्डागार

शतृ (अत्)

दुर्जन की भयंकरता

स्पृशन्नपि गजो हन्ति जिघ्रन्नपि भुजङ्गमः ।
हसन्नपि नृपो हन्ति मानयन्नपि दुर्जनः ॥१

गजः स्पृशन् अपि हन्ति	हाथी छूता हुआ भी मार डालता है
भुजंगमः जिघ्रन् अपि हन्ति	साँप सूँघता हुआ भी मार डालता है
नृपः हसन् अपि हन्ति	राजा हँसता हुआ भी मार डालता है (और)
दुर्जनः मानयन् अपि हन्ति	दुर्जन मानता हुआ भी मार डालता है ।

स्पृशन् (स्पृश-स्पृशत्) जिघ्रन् (घ्रा-जिघ्र आदेश-जिघ्रत्) हसन् (हस-हसत्) मानयन् (मन-णि० मानयत्) ।

शतृ (अत्)

जागने वाला निर्भय रहता है

पठतो नास्ति मूर्खत्वं जपतो नास्ति पातकम् ।
मौनिनः कलहो नास्ति न भयं चास्ति जाग्रतः ॥२

पठतः मूर्खत्वं नास्ति	पढ़ता हुआ मनुष्य मूर्ख नहीं रहता
जपतः पातकं नास्ति	जप करने वाले को पाप नहीं लगता
मौनिनः कलहः नास्ति	मौन रहने वाला झगड़े में नहीं पड़ता
च जाग्रतः भयं नास्ति ।	और जागने वाला निर्भय रहता है ।

पठतः (पठ-पठत् ष० ए०) जपतः (जप-जपत् ष० ए०) जाग्रतः (जागृ-जाग्रत् ष० ए०) ।

१—हितोपदेश ४. १५ २—सुभाषितरत्नभाण्डागार

शतृ (अत्)

सदा आसक्तिहीनता

पश्यन् शृण्वन् स्पृशन् जिघ्रन् अश्नन् गच्छन् स्वपन् श्वसन् ।
प्रलपन् विसृजन् गृह्णन् उन्मिषन् निमिषन् अपि ॥१

पश्यन् शृण्वन् स्पृशन् जिघ्रन्	देखता सुनता छूता सूँघता
अश्नन् गच्छन् स्वपन् श्वसन्	खाता चलता सोता सांस लेता
प्रलपन् विसृजन् गृह्णन्	बोलता छोड़ता लेता
उन्मिषन् निमिषन् अपि ।	आँखें खोलता तथा मूँदता हुआ भी
	(सदा आसक्तिहीन रहे) ।

पश्यन् (दृश–पश्य) शृण्वन् (श्रु–शृ–नु) स्पृशन् (स्पृश) जिघ्रन् (घ्रा–जिघ्र) अश्नन् (अश) गच्छन् (गम) स्वपन् (स्वप) श्वसन् (श्वस) प्रलपन् (प्र–लप) विसृजन् (वि–सृज) गृह्णन् (ग्रह) उन्मिषन् (उत्–मिष) निमिषन् (नि–मिष) ।

शानच् (आन)

कौन मनुष्य बहुज्ञ होता है ?

अधीयानो बहून् ग्रन्थान् सेवमानो बहून् गुरून् ।
लोकमानो बहून् देशान् बहुज्ञो जायते नरः ॥२

बहून् ग्रन्थान् अधीयानः	अनेक ग्रन्थों का अध्ययन करता हुआ
बहून् गुरून् सेवमानः	अनेक गुरुओं की सेवा करता हुआ तथा
बहून् देशान् लोकमानः	अनेक देशों को देखता हुआ
नरः बहुज्ञः जायते ।	मनुष्य बहुज्ञ हो जाता है, बहुत बातें जानता है ।

अधीयानः सेवमानः लोकमानः (अधि–इ, सेव, लोक) ।

१—भगवद्गीता ५, ८९ २—सम्पादक

शानच् (आन)

किस मनुष्य का उत्कर्ष होता है ?

कुर्वाणः कृतिममितां मितं शयानः
भुञ्जानो मितममितं परं ददानः ।
जानानो बहुविषयान् मितं ब्रुवाणः
उत्कर्षं भुवि लभते स वर्धमानः ॥[१]

अमितां कृतिं कुर्वाणः	जो बहुत काम करता हुआ भी
मितं शयानः	थोड़ा शयन करता है
मितं भुञ्जानः	जो थोड़ा भोजन करता हुआ
परम् अमितं ददानः	दूसरों को अधिक देता है
बहुविषयान् जानानः	जो बहुत विषयों को जानता हुआ भी
मितं ब्रुवाणः	कम बोलता है
स वर्धमानः	वह मनुष्य बढ़ता हुआ
भुवि उत्कर्षं लभते ।	संसार में उत्कर्ष प्राप्त करता है ।

कुर्वाण शयान भुञ्जान ददान जानान ब्रुवाण वर्धमान (कृ, शी, भुज, दा ज्ञा, ब्रू, वृध) ।

१—सम्पादक
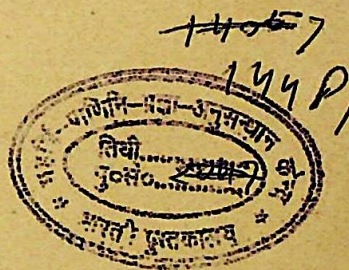
संस्कृत-प्रेमियों से निवेदन

सरलता, शीघ्रता एवं मनोरञ्जन के साथ घर
लिये, अपने बाल-बच्चों को हँसते-खेलते संस्कृत
संस्कृत की लोकव्यवहारोपयोगी धर्म, नीति, सद
सम्बन्धी ज्ञानराशि से लाभान्वित होने के लिये कार्याल
साहित्य मँगाने की कृपा करें। कृपया विस्तृत सूचीपत्र के लिये आज ही
पत्र लिखें।

व्यवस्थापक—
सार्वभौम संस्कृत प्रचार कार्यालय
डी० ३८।२० हौजकटोरा
वाराणसी।